# स्वतंत्रता की पृष्ठ-भूमि

डॉ० चन्द्र शेखर भट्ट

अनुराग प्रकाशन
अजमेर

# स्वतंत्रता की पृष्ठ-भूमि

निबंध-संग्रह

**डॉ० चन्द्रशेखर भट्ट**

मूल्य ३ ५० रुपये
सन् १९६८ ई०
प्रथम आवृत्ति

प्रकाशक
वि० ल० मिश्र, एम. ए.
अनुराग प्रकाशन,
सुन्दर विलास
अजमेर.

मुख्य वितरक :
शिक्षा प्रदर्श,
पुरानी मंडी,
अजमेर

मुद्रक :
इण्डिया प्रिण्टर्स,
कचहरी रोड,
अजमेर

# विषय

यह कहने की आवश्यकता नही है कि स्वाधीनता प्राप्ति के बाद भारतीय जन-जीवन मे सभी क्षेत्रो मे अनैतिकता और भ्रष्टाचार की वृद्धि होती जा रही है। राष्ट्र-निर्माण के लिए योजनाए बनाई गई है। तीन योजनाओ की सफलताये हमारे सामने है। चतुर्थ पचवर्षीय योजना पर कार्य प्रारम्भ हो गया है। योजनाओ से भारतीय-जन-जीवन मे क्रॉतिकारी परिवर्तन हुए है, इसमे किसी प्रकार का सन्देह नही किया जा सकता है, किन्तु सर्वसाधारण को इनसे उतना लाभ नही हो पाया है जितना होना चाहिए था।

राष्ट्र का मूलाधार है स्वस्थ व सुशील नागरिक। शीलवान् नागरिको का निर्माण योग्य अध्यापको के निर्देशन मे विद्यालयो मे होता है। भ्रष्टाचार को समाप्त करने का एक मात्र उपाय राष्ट्र के भावी नागरिको को चरित्र निर्माण के लिए प्रेरित करना है। इस बात को समझ कर ही राधाकृष्णन्-आयोग ने विद्यालयो मे नीति व धर्म की शिक्षा देने की सिफारिश की है। विविध-धर्मों वाले भारत मे धार्मिक शिक्षा का क्या स्वरूप हो, इस विषय पर पर्याप्त समय से विचार किया जाता रहा है। सभी लोगो की सहमति से यह निर्णय लिया गया है कि सभी धर्मों की उत्तम नीति-विषयक बातो से विद्यार्थियो का परिचय कराया जाय। इससे एक ओर धार्मिक सकीर्णता दूर होगी और धर्म-निरपेक्ष राज्य के उद्देश्य की सिद्धि होगी तथा दूसरी ओर विद्यार्थियो पर ऐसी बातो का प्रभाव भी पडेगा जिनके विषय मे विविध धर्मों के आचार्यों की एक मति है।

नैतिक व धार्मिक शिक्षा देने मे सबसे बडी कठिनाई यह आती है कि सामान्यतया रूखे उपदेशो का छात्रो पर अपेक्षित प्रभाव नही पडता।

अब शिक्षा के क्षेत्र मे व्यापक-शोध से प्रमाणित हो चुका है कि शिक्षा का आधार आदेश नही आदर्श होना चाहिए। अतः रूखे उपदेशो के स्थान पर जन-जीवन के चारित्रिक-आदर्श छात्र पर अधिक प्रभाव डालेगे। इस उद्देश्य से इस पुस्तक की रचना की गई है।

प्रस्तुत पुस्तक मे चरित्र निर्माण सम्वन्धी १० निवन्ध है। इनमे चरित्र सम्वन्धी सभी पहलुओ पर विचार किया गया है। कही भी प्रत्यक्ष रूप से उपदेश देने की प्रवृत्ति नही रही है। अप्रत्यक्ष रूप से छात्रो के विकास-मान मस्तिष्क मे अच्छाई की ओर आकर्षित होने व बुराई से वचने के लिए प्रयत्नशील होने की वात विठाई गई है। उदाहरणो द्वारा निवन्धो को रूचिकर वनाने की चेष्ठा की गई है।

सच्चरित्रता राष्ट्र-निर्माण की धुरी है। सच्चरित्रता की ओर आकृष्ट करने वाले ये सभी निवन्ध हमारे गणतत्र राष्ट्र के विकास के लिए वैचारिक पृष्ठभूमि तैयार करते है। इसलिए अन्तिम निवन्ध मे अन्य निवन्धो की विचार धारा का उपसहार करते हुए पुस्तक का नाम "स्वतन्त्रता की पृष्ठभूमि" रखा है। देश के नोनिहालो को इससे अपने चरित्र-निर्माण मे सहायता मिली और इस प्रकार राष्ट्राराधन के लिए प्रेरणा मिली तो लेखक का श्रम सार्थक होगा।

लेखक

# संघर्ष .. साहस .. और स्वावलम्बन

युवक ! उठो !! अपने पौरुष को सभालो और कुहरे की तरह मन पर छाई हुई इस निराशा को दूर करो। यह सत्य है कि जीवन के इस बीहड पथ पर शूल ही शूल बिखरे हुए हैं पर यह भी सत्य है कि तुम उन सब को फूल बनाते हुए आगे बढ सकते हो। क्या तुम नही जानते कि तुम्हारे अन्तस्तल की गहराइयो को चीर कर फूट पडने वाले इस करूण क्रन्दन को तुम मुक्त हास्य की मधुरता मे बदल देने की शक्ति रखते हो ? यदि जानते हो तो रोना बन्द करदो और विपत्ति के हर आक्रमण का हँसते हुए उत्तर दो। ये विपत्तिया तुम्हें रुलाने के लिए नही, किन्तु तुम्हारे पौरुष को चमकाने के लिये आती हैं।

"युवक ! लो, नौका और विमान के शौर्य के सम्मुख अन्धकार, सागर और आकाश भी जब पराजित हो जाते है, तब तुम्हे किस बात का भय है ? तुम्हे अपनी विजय-यात्रा अभी से प्रारभ कर देनी है। पहाड के समान दिखाई देने वाली ये बाधाए और बादलो की तरह घिर घिर आने वाले ये सकट निश्चित ही एक दिन पराजित हो जाएगे। युवक ! तुम लौ की तरह जलो, नौका की तरह चलो, और विमान की की तरह उडो। तुम्हारा मार्ग न अन्धकार रोक सकेगा, न समुद्र और न आकाश।"

कितने प्रेरणाम्पद शब्द हैं मुनि श्री बुद्धमलजी के। एक एक शब्द मानो ज्वलन्त चिनगारी है जिसके सामने निराशान्धकार काई की तरह फट कर हिम्मत का उजाला फैल जाता है।

जीवन स्वय एक सघर्ष है, जिसमे वे ही जीवित रहने के अधिकारी है, जो इस सघर्ष मे पार उतरते है, यदि इस सघर्ष-स्थल मे जरा सी भी

निराशा आई किंचित भी अकर्मण्यता ने प्रवेश पाया, तो यह निश्चित है कि विजय हमसे दूर से दूर होती चली जायगी।

एक प्रमुख विद्वान के अनुसार सघर्ष हीन जीवन और मृत्यु मे केवल इतना ही अन्तर है कि जीवित सास लेते है इसके अतिरिक्त उनका पूरा जीवन मृत, नारकीय एव घृणास्पद है। सघर्ष ही वह अज्ञात शक्ति है, जो हमे आगे बढने की प्रेरणा देती है।

नौजवान ! तुम तरुण हो ! तुम्हारी धमनियो मे उष्ण रक्त लहरा रहा है। तुम मे वह शक्ति हैं कि यमराज को भी मुकाबले के लिये ललकार सकते हो। फिर क्या कारण है, कि तुम हताश, निराश और कायर की तरह कोने मे दुबक कर पडे हो। यह सही है, कि विपत्तियो की बिजलिया तुम्हारे सिर पर कड़क रही है। यह भी सही है, तूफानी आंधिया, बाधाए तुम्हारी राह रोके खडी है, पर क्या इन सबको देखकर विचलित होना पौरुपता का चिन्ह है ? नही, तुम उठो ! तुम तरुण हो, तुम्हारे शोणित मे गरमी है, तुम्हारे भुजदण्डो मे इन चुनोतियो का सामना करने की ताकत है और तुम्हारा यह विशाल वक्षस्थल विपत्तियो और सकटो से भिडने को आतुर है। फिर तुम निराश क्यो हो। सुभग ! उठो ! एक क्षण की देरी तुम्हारे शत्रुओ को स्वर्णावसर दे सकती है। असफलता की यह चट्टान जितनी बडी तुम्हे दिखाई दे रही है वह उतनी बडी नही है। युवक ! इस पर तो सिर्फ तुम्हारे एक प्रहार की आवश्यकता है। इस बार का प्रहार तुम्हारा अंतिम प्रहार है। फिर तुम देखना इस भग्न चट्टान के पीछे विजयश्री मुस्कराती हुई तुम्हारा स्वागत करने को आतुर है। ठहरो मत ! रुको मत !! रुको मत युवक !!! उठो, कर्त्तव्य पुकार रहा है, सघर्ष तुम्हे चुनौती दे रहा है। चुनौती स्वीकार करो नौजवान ! उठो, प्रहार करो।

भगवान श्री कृष्ण ने गीता मे सघर्ष की ही प्रधानता अर्जुन को समझाई है। उन्होंने स्पष्ट कहा है—

अक्रोधेन जयेत्क्रोधमसाधुं साधुना जयेत् ।
धर्मेण निधन श्रेयो न जय पाप कर्मण ।।

यदि तुम चाहते हो कि तुम विजयी बनो, सफलता तुम्हारे चरण चूमे, 'विजय' श्री का हाथ तुम्हारे हाथो मे हो, तो फिर रुकने की क्या आवश्यकता है। परिस्थितिया तुम्हारा क्या बिगाड देगी। विरोधी परिस्थितियो से मित्रता करने की अपेक्षा तो यह अच्छा है, कि मृत्यु से ही मिल लो। विरोधी परिस्थितियो से मित्रता नही सघर्ष अपेक्षित है। अपनी योग्यता और श्रम पर विश्वास रक्खो। अवसर की प्रतीक्षा करो। धैर्य तुम्हारा साथी है, अवसर को चूकना बुद्धिमानी नही।

नौजवान ! अपने पैरो मे स्थिरता दो। तुम पर चाहे दुःखो का लहराता समुद्र भले ही गुजर जाय, पर यह ध्यान रहे कि तुम्हारे कदम डगमगाये नही। चट्टान की तरह दृढ रहो। हिम्मत तुम्हारे साथ है, विश्वास तुम्हारा साथी, धैर्य तुम्हारा अनुचर है। इन विश्वस्त साथियो के साथ कर्मक्षेत्र मे कूद पडो। अवसर तुम्हारी प्रतीक्षा मे है, सफलता तुम्हारा इन्तजार कर रही है।

यग ने एक जगह बडी सुन्दर उक्ति कही है। वह कहता है कि किसी भी छोटी दिखने वाली बात को तुच्छ और छोटी मत समझो, सभव है, वह छोटी सी बात भी तुम्हारे लिये दुखदायी सिद्ध हो सके। छोटी समझ कर उसका तिरस्कार कर देना मूर्खता का प्रथम चिन्ह है।

एक घने अरण्य मे दोपहरी मे हाफता हुआ वनाधिराज सिंह सो रहा था, उसकी झपकी लगी ही थी कि उसे अपने शरीर पर कुछ सरसराहट सी अनुभव हुई। उसने धीरे से आख खोली देखा तो एक छोटा सा चूहा उसके शरीर पर खेल रहा है, उसने एक ही झपेटे मे उस चूहे को पकड लिया।

चूहा सिंह की पकड मे फस चिचियाया, परन्तु सब व्यर्थ। उसे मृत्यु स्पष्ट दिखाई देने लगी। अत मे वह गिडगिडाता हुआ बोला, महोदय ! आप जगल के राजा हैं, और मैं तो आपके राज्य का साधारण सा नागरिक हूँ। आपसे जीवन दान मागता हूँ। यदि संभव हुआ तो भविष्य मे मैं आपकी सहायता करूगा।

सिंह जोरो से हँसा। बोला- अरे मूर्ख। कहा तू पिद्दी सा चूहा और कहाँ मै शेर। तू क्या मेरी सहायता कर सकता है।

पर महोदय! मुझे मार देने से आपका पेट भरेगा नही, फिर क्यो न मुझे जीवन देने की कृपा करें। मैं आपका एहसान उतारूगा।

शेर एक बार फिर हसा और हाथ की पकड ढीली कर दी! चूहा मृत्यु के चगुल से छूट उछलता-कूदता अपनी टोली मे जा मिला।

कई दिन बीत गये। बात आई गई हो गई। एक बार उसी जगल मे शिकारियो ने जाल बिछाया, और बदकिस्मती से वही शेर उस जाल मे फस गया। ज्यो ज्यो उसने उस जाल से मुक्ति पानी चाही, त्यो-त्यो वह उलझता ही गया। मृत्यू को सामने प्रत्यक्ष देखकर शेर जोरो से दहाडने लगा। सारा जंगल उसकी दहाडो से थर्रा उठा।

उस चूहे ने भी अपने घर मे बैठे उस शेर की दहाड को सुना। वह तुरन्त बाहर निकल आया। देखा, कि वही शेर जाल मे उलझा हुआ तडफ रहा है। उसने तुरन्त अपना कर्तव्य स्थिर कर लिया, और अपने छोटे परन्तु पैने दातो से उस जाल को काट डाला। कुछ ही समय उपरान्त शेर ने अपने आप को मुक्त पाया, उसने उस नन्हे मित्र का बहुत बहुत आभार माना, और बोला, आज मैंने जीवन का एक नया पाठ पढा कि कभी किसी को छोटा मत समझो, और एक जोरो से दहाड मारकर घने जगल मे घुस गया।

वस्तुत. किसी भी कार्य को तुच्छ, हल्का और छोटा समझना भारी भूल है। किसी पहली जलधारा के बीच पड़ा कंकड नदी के प्रवाह को

ही वदल देता है । एक छोटी सी चीटी भीमकाय हाथी के मृत्यु का कारण वन सकती है ।

साहस जीवन का एक आवश्यक धर्म है । सघर्षशील व्यक्तियो के जीवन मे ही साहस का सचार होता है । इग्लैंड के प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ चर्चिल के शब्दो मे मानव के सभी गुणो मे साहस पहला गुण है, क्योकि यह सभी गुणो की जिम्मेदारी लेता है । साहस के सामने वडी से वडी चट्टाने टूट जाती है, पर्वत झुक जाते है और समुद्र अपना रास्ता दे देता है ।

एडमण्ड कूपर ने अपनी डायरी मे एक वडी ही रोचक घटना का वर्णन किया है । उसकी डायरी के अनुसार द्वितीय महायुद्ध के तूफानी दिनो मे एक भीरु सा लजीला नवयुवक सेना मे भर्ती होने को आया । जब उसके विगत जीवन का अध्ययन किया गया तो पता चला कि वह अत्यन्त ढीला ढाला, सुस्त एव अयोग्य विद्यार्थी था । कक्षा मे वह सबसे पिछली बैंच पर बैठता, और अधिकतर कक्षा से अनुपस्थित रहता था ।

वस्तुत उसका विद्यार्थी-जीवन निकम्मा और अयोग्य था, उसे सेना मे भरती करने से मना कर दिया । वह निराश सा वापिस लौट गया । परन्तु कुछ दिनो के बाद वह न मालूम किसी प्रकार सेना मे भर्ती हो गया । जव सुना, तो बडा दु ख हुआ, और यह निश्चय हो गया कि वह किसी दिन अपने अग तुडवा कर घर लौटेगा ।

परन्तु कुछ दिनो के पश्चात् आखो ने जो दृश्य देखा, वह अनोखा था । वीरता के उपलक्ष मे जो पदक वाँटे जा रहे थे, उसमे उसका स्थान सर्व प्रथम था । पता लगाने पर मालूम हुआ, कि उसने युद्ध क्षेत्र मे अतुलनीय शौर्य का प्रदर्शन किया है । गोलियो की वौछार मे उसने साथियो तक रसद पहुँचाई है, और वम के धमाको मे चारो तरफ से घिर जाने पर भी उसने हिम्मत नही हारी अपितु अपनी पूरी टोली को सकुशल बचाने मे सफल हो गया ।

यह सब क्या था ? जाहिल, सुस्त और निकम्मा सा लगने वाला वह युवक ऐसी स्थिति तक कैसे पहुँच सका ? इसका एक मात्र उत्तर है, कि उसमे अन्य गुणो की न्यूनता होते हुए भी साहस का अभाव नही था। साहस के बल पर ही वह सेना मे उच्च पद प्राप्त कर सका।

मुझे एक वृद्ध व्यक्ति की बात याद आती है, जिसे यह पूछने पर कि, क्या मैं व्यापार आरम्भ करू ?

उन्होने पूछा, 'क्यो कुछ अडचन है क्या' ?

मैने कहा—अडचन तो कुछ नही, परन्तु भय यह है कि कही मैं अपनी पूजी न खो बैठू।

इस बात पर उन्होने जो उत्तर दिया था, वह स्वर्णाक्षरो मे लिखने योग्य है उन्होंने कहा था—महोदय समुद्र के किनारे बैठे रहने से इस बात का पता चल नही सकता कि समुद्र की गहराई कितनी है ? समुद्र की गहराई का तो उसमे डुबकी लगाने से ही पता चलता है।

मुझे एक दम दिशा ज्ञान हो गया, और कुछ ही दिनो मे मैं व्यापार मे बहुत चमका, और आज एक करोडपति हूँ।

उपरोक्त वार्त्तालाप है अमेरिका के प्रसिद्ध धनी रैफग्रीक का, जो सफल दस धनियो मे से एक है। एक साधारण सा दिखाई देने वाला युवक कुछ ही दिनो के पश्चात् जो सफल व्यापारी बन सका, उसके पीछे भी साहस कार्य कर रहा था।

तो मेरे भाई ! तुम स्वय अपने आप को पहिचानो तुम जवान हो, बहादुर हो, परन्तु फिर भी न मालूम क्यो तुम्हें निराशा प्राप्त हो रही है। सम्भवत. साहस का अभाव हो। जो मनुष्य अपने विराट् रूप को पहचान लेता है, वही जीवन मे सफल हो सकता है।

न्यूयार्क की एक प्रिंसिपल ने अपने अनुभव पुस्तकाकार में प्रकाशित कराये हैं। उसने लिखा है कि वह अपने बचपन मे हीन भावनाओं से

ग्रस्त साधारण सी लडकी थी, परन्तु जब उसे इस बात का अनुभव हुआ कि उसकी ससार को महती आवश्यकता है। वह ससार मे कुछ कर गुजरने के लिए आई है तो एकदम से ऐसे लगा, जैसे मानो मेरा अतर अन्दर ही अन्दर बदल रहा है और उसमे साहस का वह वेग आया कि निरक्षर सी लडकी आज एक सफल शिक्षा शास्त्री है।

वह महिला जीवन मे सफल सिद्ध हुई, क्यो ? इसलिए कि उसने साहस के मर्म को पहिचान लिया था। शिक्षक जीवन के लिये उसकी आत्मा छटपटा रही थी। उसे उसका मनोनुकूल मार्ग मिल गया। और वह कुछ ही वर्षो के अनन्तर विकास की अन्तिम सीढी तक पहुँच सकी।

जो कुछ आप कर रहे है, उससे सहस्त्र गुना ज्यादा कार्य करने की क्षमता आप मे है। आप अभी जिस पद पर है, उससे उच्चपद निश्चय रूप से आपके चरण चूमने को आतुर है। आप का व्यापार विस्तार चाहता है, आपका जीवन उन्नति का अभिलापी है और आप मे वह शक्ति भी विद्यमान है, जिसके वल पर आप इप्सित प्राप्त कर सकें। परन्तु आवश्यकता है उस शक्ति को पहिचानने की। ईश्वर का यही आदेश है कि तुम अपना विकास करो। उठो ! एक क्षण भी विलम्ब करने का समय नही है।

अनन्त कार्य क्षेत्र तुम्हारे सामने फैला हुआ है। युवक ! यो बैठे रहने मे कार्य कव तक चलेगा। इस प्रकार के निष्क्रिय जीवन को जीने से लाभ क्या है ? उठ खडे होओ। कर्त्तव्य गला फाड फाड कर तुम्हे पुकार रहा है, सुअवसर तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा है। तुम्हारे ये दो भुजदण्ड तुम्हे सहयोग देने को तैयार हैं। शक्ति का अनन्त भण्डार तुममे सुरक्षित है। युवक ! उठो, बढ़ो ! आगे वढना तुम्हारा प्रथम कर्त्तव्य हे।

चरित्र का निखार साहस मे ही सुरक्षित है। चरित्र विकास के लेखक ने चरित्र के मूल को स्पप्ट करते हुए कहा है कि चरित्र कभी

हारता नही क्योकि उसके मूल मे यह अटल विश्वास सुरक्षित है कि मैं अमर तथा अनन्त प्रगतिशील हूँ। विश्व जगत की सभी शक्तियो तथा सृष्टि के सभी नियम नेकी तथा भलाई के पक्ष पर आधारित हैं। मैं अपना भाग्य निर्माता हूँ, और कोई भी मेरे भाग्य को बनाने तथा बिगाड़ने वाला न है, और न हो सकता है। विजय तथा सफलता सुनिश्चित है। यदि मै चाहूँ, तो अपने ध्येय पर पहुँचने मे विलम्ब तो कर सकता हूँ किन्तु उससे सदा के लिए दूर नही रह सकता, तथा नही कोई मुझे उससे दूर रख सकता है। आनन्द तथा अमृत मेरी अपनी सत्ता के दो रूप ही है, किसी की क्या मजाल कि मुझसे मेरी शुद्ध सत्ता, मेरी विमल ज्योति, मेरा निजानन्द, तथा मेरा अमृत छीन सके। मै जहाँ तथा जिस अवस्था मे भी रहूँ, परमानन्द तथा अथाह अमृत-सागर मुझमे तरगायित है, तथा दुःख और मृत्यु इसे उछाला देने के साधन ही है।

सिडनी स्मिथ ने एक बार कहा था—'थोडे से साहस के अभाव मे काफी प्रतिभा ससार से खो जाती है। प्रत्येक दिन ऐसे अपरिचित व्यक्तियो को कब्र मे भेजता है जिनकी कायरता ने उनको प्रथम प्रयास से भी वचित कर रखा है।

जो मनुष्य साहस से समुद्र की तली मे पहुँचता है, उसे रत्न और घोंघे दोनो ही प्राप्त होते हैं। परन्तु उनमे से जो भी थोडे बहुत रत्न प्राप्त होते हैं, वे अमूल्य होते हैं। कहा भी है—

> जिन खोजा तिन पाइया, गहरे पानी पैठ।
> मै बौरा डूबन डरा, रहा किनारे बैठ॥

जो किनारे बैठा रहता है, भाग्य उसका कभी साथ नहीं देता। दुनियाँ दुःखमय होने के साथ ही साथ सघर्षशील भी है। जो इस सघर्ष मे सहयोग देता है वही सुखमय जीवन प्राप्त कर सकता है।

एक दिन एक नवयुवक मेरे पास आया । मैं लिखने की मेज पर बैठा बैठा कुछ लिख रहा था । वह बिना प्रणाम किये धम्म से मेरे पास की कुर्सी पर आकर बैठ गया । उसके चेहरे पर चिन्ता की रेखाए स्पष्ट दीख रही थी ।

मैंने उसे जरा आश्वस्त होने दिया और फिर नौकर से उसे एक गिलास पानी देने को कहा ।

जब वह कुछ आश्वस्त हुआ, तो बोला मै आप से एक सलाह लेने आया हूँ ।

कहिये ? किस तकलीफ मे आप घिर गये ?

कौन सी चिन्ता ने··· ··· ···

मेरे कहने के पूर्व ही वह फूट फूट कर रोने लगा । बोला—कुछ मत पूछिये । मेरा सर्वनाश हो चुका है, एक प्रकार से मै समाप्त सा ही हो गया हूँ । मेरा हर उपाय व्यर्थ जा रहा है । मेरी हर योजना निष्फल होती जा रही है । मैं सोने के हाथ लगाता हूँ तो वह मिट्टी बन जाती हे । मै ससार का सबसे अधिक पीडित, दु खी और दरिद्र व्यक्ति हूँ । मैं ' (और आगे के शब्द उसकी हिचकियो मे खो गये)

–पर किस प्रकार ?—मैने पूछा ।

उसने आद्यन्त अपनी राम गाथा सुनाई । वस्तुत वह एक दीन हीन नवयुवक था । उसने बहुत बहुत कष्ट सहे थे । काफी अर्से से वह बेरोजगार था । उसके एक भारी परिवार था, परन्तु वह अपने बच्चो की शिक्षा की व्यवस्था भी ठीक प्रकार से नही कर सकता था । जीवन की चक्की मे वह बुझ सा गया था । कष्टो के थपेडो से वह विचलित सा हो गया था, और लोगो के व्यग बाणो से वह बिंध सा गया था ।

मैने उसे धीरे धीरे समझाना प्रारम्भ किया । मैने बताया कि अब सिर्फ एक ही रास्ता रह गया है, और वह हे अपने जीवन मे उत्साह

का सचार। वह संघर्षों मे पिस गया है परन्तु फिर भी उसे साहस का हाथ नही छोडना चाहिये। यदि वह निराशा के अन्धकार से बाहर निकले तो अवश्य उसे फिर सफलता मिल सकती है। उसका स्वास्थ्य ईर्ष्या योग्य है। उसका व्यक्तित्व भव्य है, और बात-चीत का लहजा तारीफ करने योग्य है।

तो क्या मुझे सफलता मिल सकती है ?—उसके मानस मे हल्की सी चिनगारी जगी।

क्यो नही ? क्या अभाव है तुममे ? किस बात की कमी है तुम्हारे पास, कि तुम उन्नति न कर सको। अपने मस्तिष्क से उलझलूल विचार निकाल दो, और उत्साह का सुखद झोका आने दो। तुम देखोगे कि शीघ्र ही तुम्हे उच्च पद प्राप्त होगा।

वह आश्वस्त होकर चला गया। उस दिन से उसने नई जिन्दगी जीने का प्रयास किया और कुछ ही दिनो के बाद सुना कि उसे नौकरी मिल गई है और सफल जीवन व्यतीत कर रहा है।

भाग्य के भरोसे बैठे रहना या भाग्य को दोष देते रहना पतन का चिन्ह है। भाग्य मानव का निर्माता नही होता अपितु मानव ही भाग्य का निर्माता होता है। उद्योगी व्यक्ति ही लक्ष्मी का वरण करते हैं—

> उद्योगिन पुरुषसिंह मुपैति लक्ष्मी ?
> दैवेन देयमिति का पुरुषाः वदन्तिः।
> दैवं निहित्य कुरु पौरुष मात्मशक्त्या।
> यत्ने कृते यदि न सिद्धयति कोऽत्रदोषः ?

भाग्य का निर्माता मानव है, तो मानव का निर्माता उसका साहस है। बिना साहस के कुछ भी असभव है। नेपोलियन बोनापार्ट की

सेनाओ के सामने जब आल्प्स पर्वत आया तो सेना एक झटके से रुक गयी। पूछा—क्या बात है ?

यह आल्प्स ?

नेपोलियन हसा। बोला—मेरे शब्द कोश मे असभव शब्द है ही नही। या तो आल्प्स नही रहेगा या फिर मैं ही मिट जाऊगा। इतिहास साक्षी है कि नेपोलियन विश्व विजयी हो सका।

साहसी व्यक्ति दुःख सुख को नही गिनता। जो आपत्तियो को सोच सोच कर ही घबरा जाता है, वह श्रेष्ठ व्यक्ति कदापि नही। खल व्यक्ति काम प्रारम्भ करते हुए ही घबराते है, परन्तु साहसी व्यक्ति जिस कार्य मे हाथ डाल देते है, उसे पूरा करके ही छोडते है—

> प्रारभ्यते न खलु विघ्न भयेन नीचै।
> प्रारभ्य विघ्न विहिता विरमन्ति मध्याः॥
> विघ्नै पुन पुनरपि प्रतिहन्यमाना'।
> प्रारब्धमुत्तमजना न परित्यजन्ति॥

साहसी व्यक्ति का लक्ष्य निश्चित होता है। भगतसिह असेम्बली मे बम फेक कर चाहते तो भाग सकते थे, परन्तु वे वहीं डटे रहे, हटे नही। बोले—मैं कायर नही हूँ, जो भाग खडा होऊँ।

चुसुल के युद्ध मैदान मे राजस्थान के रण बाँकुरे मेजर शैतान सिंह ने जिस साहस का परिचय दिया, क्या वह भुलाया जा सकता है ? भावी पीढियाँ उसके कार्यो पर गर्व करेगी।

स्वावलम्बी व्यक्ति वही हो सकता है, जिसमे धैर्य और साहस का अद्भुत सम्मिश्रण हो। स्वामी विवेकानन्द ने अपने एक प्रवचन मे कहा है कि स्वावलम्बन ही मानवोन्नति का सफल द्वार है।

मै एक ऐसे नवयुवक को जानता हूँ, जिसने स्वावलबन का महत्व भली-भांति समझ लिया था। बचपन मे ही, उसके माँ बाप [illegible]

उसे आश्रय देने वाला कोई न था। चारो तरफ निराशा का सघनान्धकार ही छाया हुआ था, यदि दूसरा होता तो निश्चित रूप से परिस्थितियो के सामने घुटने टेक देता। परन्तु वह तो अद्भुत जीवट वाला व्यक्ति था न। उसने घर घर चने वेचने प्रारम्भ किये। उससे जो भी वचता उससे पेट भरता। शिक्षा की लौ वचपन से ही उसके हृदय मे लग गई थी रात को घासलेट न होने के कारण सरकारी सडक के लैम्प के नीचे वैठकर पढता। अन्त मे उसका स्वावलम्वन रग लाया। स्वावलम्वन ने उसके मन, मस्तिष्क और शरीर को फौलाद वना दिया। परिस्थितियो से जूझते जूझते वह पक्का वन गया था। आज वह एक सफल राजपत्रित अधिकारी है। विलास के सभी साधन है, और सुखमय जीवन व्यतीत कर रहा है।

ऐसे हजारो उदाहरण है कि साधारण सा अखवार वेचने वाला युवक आगे चलकर अमेरिका का राष्ट्रपति वन गया। विख्यात वैज्ञानिक एडिसन का वचपन किससे छिपा है। महामना मदन मोहन मालवीय, डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद आदि कई चोटी के नेता अपने परिश्रम और स्वाध्याय से ही इतने ऊँचे उठ सके है।

स्वावलम्वी व्यक्ति छोटे मे छोटे कार्य को भी करने मे हिचकिचाता नही, यदि वह कार्य सम्मान जनक हो। वह अपव्ययी नही होता अपितु अपने उपार्जित धन मे से कुछ वचाकर सद् कार्यो मे व्यय करता है! वह समय के मूल्य को जानता है और उसके प्रत्येक क्षण का मूल्य आकता है। उसे अधूरे पडे काम मे झुभलाहट होती है, वह प्रत्येक कार्य की सिद्धि मे विश्वास रखता है।

भील पुत्र एकलव्य। मन मे तीर चलाना सीखने की उत्कट चाह। परन्तु ओछे कुल मे उत्पन्न इस भील पुत्र को कौन मुह लगाता।

अन्त मे एक दिन वह वहाँ जा पहुँचा जहाँ गुरु द्रोणाचार्य

राजपुत्रो को शिक्षा दे रहे थे। उसने श्रृद्धा विनय से गुरु के चरणो मे प्रणाम किया।

तुम कौन हो ? द्रोणाचार्य का प्रश्न था।

एक साधारण से परिवार मे जन्मा भील पुत्र। नपा तुला सयम सा विनय-युक्त उत्तर था।

यहाँ किस उद्देश्य से आये हो ?

प्रभु ! मै शस्त्र शिक्षा प्राप्त करना चाहता हूँ। आपके चरणो मे बैठकर शिक्षा प्राप्त करना चाहता हूँ।

द्रोणाचार्य व्यग से हँसे। बोले—मै नीच कुल मे उत्पन्न युवक को अपना शिष्य नही बनाता तुम्हे शिष्य बनाने मे मैं असमर्थ हूँ। तुम जा सकते हो।

पर क्या इससे एकलव्य हताश होकर निश्चेष्ट बैठ गया। नही। उसके हृदय मे साहस का वेग उफन रहा था। उसने जीवन मे स्वावलम्बन का पाठ भली-भाँति पढ लिया था।

वह घर आया। गुरु द्रोणाचार्य की मूर्ति बनाई और उसके चरणो मे बैठ कर तीर चलाने का अभ्यास करने लगा। शीघ्र ही वह अस्त्र-शस्त्र विद्या मे निपुण हो गया। उसका मुकावला अर्जुन के अतिरिक्त किसी से भी सभव नही था।

ससार का इतिहास ऐसे कर्मयोगियो के उदाहरणो से भरा पड़ा है जिन्होने सघर्ष, सयम, साहस, अध्यवसाय, और स्वावलम्बन के बल पर इतिहास की पगडडी पर अमिट चिन्ह छोड गये है।

मेरे साथियो ! उठो ! इस प्रकार से भाग्य के भरोसे पडे रहना जीवन का चिन्ह नही। क्षण-क्षण सुलग-सुलग कर जलना कायरता का चिन्ह है। जलना है, तो एक बार ही धधक कर जलो। ये बादल, यह

आकाश, ये नक्षत्र, तारे यह चाँद तुमसे परे नही है। ये सब तुम्हारी गति की सीमा के भीतर हैं। ये उफनती नदियाँ तुम्हारे चरणों की ओर लौट सकती है। यह लहराता समुद्र तुम्हारे चरण चूमने को आतुर हो सकता है। यदि तुममे जीवन है लगन है व सघर्षो से भिडने की क्षमता है। साहस के रथ पर आरूढ हो, और स्वावलम्बन की टाप यदि तुम्हारे हाथो मे है, तो फिर कोई बाधा नही, जो तुम्हे रोक सके। तुम युवक हो। उठो। बढो ।। विजय तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही है, सुखमय जीवन तुम्हे पुकार रहा है,………… ……. पुकार रहा है।

०

# नैतिकता और सदाचार

जीवन के समस्त सद्व्यवहारो को यदि एक सूक्त मे कहा जाय, तो वह होगा नैतिकता। जीवन के उत्थान-पतन, उच्च-नीच, एवं विरोध वैषम्य मे सुखद सामंजस्य स्थापित करने वाली कडी मानव का नीति-पूर्वक विचारना और कार्य करना है। भगवान् वेदव्यास ने कहा है कि जिस मानव ने नीति निपुणता, नीति और नैतिकता के अर्थो पर ध्यान नही दिया है, उसका जीवन व्यर्थ है, वह इस पृथ्वी पर भारस्वरूप है।

यूनानी विचारक सुकरात की एक प्रसिद्ध उक्ति है—"यदि किसी स्थान पर कोई गलत काम होता हुआ देखे तो अपने सिर पर संकट ओढ कर भी गलती करने वालो को उसकी भूल की ओर से सावधान करदे।" यदि ध्यानपूर्वक देखा जाय, तो सुकरात की इन ढाई पंक्तियो मे उच्च लोक-कल्याण की भावना छिपी हुई पडी है। सभी व्यक्ति यदि इस उक्ति पर, गभीरतापूर्वक मनन करने लग जायं, तो कोई सन्देह नही कि पृथ्वी स्वर्ग बन जाय।

परन्तु इससे यह न समझ लेना चाहिये कि यह मार्ग कुसुमवत् है, अपितु इस मार्ग पर चलने वालो को तो पग-पग पर कॉटे बिखरे मिलते है। दूसरो की भूल निकालना जीवन का सबसे बडा कार्य है, सर्वोच्च साहसिक कृत्य है, परन्तु फिर भी लोग सत्य-पथ पर आरूढ होकर गलतियो की ओर दिशा-निर्देश करते ही है। सुकरात ने इसी हेतु जहर का प्याला पिया, ईसा को शूली पर चढना पडा और महात्मा गाधी को अपने वक्षस्थल पर तीन-तीन गोलियो के वार सहने पडे। केवल इतनी सी बात के लिये कि उन्होने लोगो को उनकी भूलो के प्रति सावधान किया था।

हममें से कितने ऐसे लोग है जो बाइबल की इस उक्ति पर ध्यान देते हैं कि सदाचार ही सत्य है, और सत्य की खोज ही ईश्वर है। हमारे जीवन के प्रत्येक कर्म, विचार और विश्वास का प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष प्रभाव हमारे भावी जीवन पर पडता रहता है। तभी तो ईसा ने कहा था, "स्वर्ग और पृथ्वी भले ही मिट जायं, परन्तु दुनिया से न्याय, सद्-व्यवहार, नीति और सदाचार नही मिट सकते।" संसार की भौतिक वस्तुओ से सहस्र गुना अधिक इन शब्दो मे शक्ति थी। लाखो अश्वो का बल इन पंक्तियो मे था परन्तु तभी, जब कि हम इन शब्दो के अन्तर मे प्रवेश करें।

विश्व-कवि रवीन्द्र ने वैराग्य की अपेक्षा कर्म-पक्ष को अधिक महत्त्व दिया, क्योकि कर्तव्य-क्षेत्र में रहने से ही व्यक्ति नीति-अनीति, सदाचार के शब्दो का अर्थ समझ सकता है, और तभी विश्व-कल्याण संभव है। उनके अनुसार–

वैराग्य साधने मुक्ति मे आभार नय।

असन्ख्य वंधन माझे महानन्द मय लभिन मुक्तिरस्वाद।

हमारा जीवन असंख्य ऐसे-ऐसे कोषाणुओ से बना है, जो अपने आपमे स्वतंत्र होते हुए भी बंधन-युक्त है। इनमे से प्रत्येक में इतनी शक्ति है, कि मानव विश्व के प्रचण्ड से प्रचण्ड कष्टो का भी हँस कर सामना कर सकता है। वे ही व्यक्ति विश्व मे नाम अमर कर जाते है जो नैतिक पथ बनाने मे तनिक भी नही हिचकिचाते, वरन हँसते-हँसते कष्टो का सामना करते है। संस्कृत की एक प्रसिद्ध उक्ति है—

सौजन्य धन्य जनुष: पुरुषा: परेषा
दोषान् विहाय गुणमेव गवेषयन्ति।
त्यक्त्वा भुजंगमविषं ही पटीर गर्भान्
सौगन्ध्यमेव पवना परियाऽऽ यन्ति॥

वे ही मनुष्य धन्य हैं, जो दूसरो के दोषों को दिखाते हुए नहीं हिचकिचाते जो अन्य भटके हुओ को नीतियुक्त मार्ग बताते है, उन्ही विरले पुरुषो का जीवन धन्य है। क्या चदन पर काले फणिधर लिपटे रहने पर वह अपनी सुगन्ध देना छोड देता है, नही। कदापि नही। बाबा तुलसीदास ने तो स्पष्ट चेतावनी देते हुए कहा है—

नीति न तजिय राज-पद पाये।

नि सन्देह ऐसे पुरुष कायर है। जो संसार के संघर्षो से घबराकर भाग खडे होते है। वे कायर, क्लीव और दुराचारी है, जिन्होने जीवन मे नैतिकता का पाठ नही पढा। ऐसे पुरुष चाहे कितने ही गुणी हो, धुरन्धर पंडित हो, विद्वान्-शिरोमणि हो, परन्तु यदि उनके जीवन मे सदाचार के अर्थ ने प्रवेश नही पाया है, तो व्यक्ति विश्व मे होने न होने के बराबर है। महाभारत की एक उक्ति के अनुसार "नैतिकता ही भूमण्डल का अमृत है, यही उत्तम नेत्र है, और यही श्रेय प्राप्ति का सर्वोच्च उपाय है।"

सदाचार कडे से कडे विरोधियो को मोम बना देता है। सम्राट् सप्तम एडवर्ड एक बार इटली गये। इटली निवासी उनका आतिथ्य करने मे हिचकिचाते थे, फिर भी उन्होने बडी धूमधाम से उनका स्वागत करने का निश्चय किया। जहाज से लेकर राजमहल तक सम्राट् के आने के मार्ग पर मखमल का, नेत्रमुग्धकारी वस्त्र बिछाया परन्तु राजभवन से पहले वह वस्त्र कम पड गया। सम्राट् आ रहे थे। इतना समय नही था कि और कुछ प्रबन्ध किया जाय। अधिकारियो ने तुरन्त अपने देश का झडा उस नगी बची हुई जगह पर बिछा दिया।

सम्राट् आये और उन्होने वहाँ अपने सम्मान मे इटली का झंडा बिछा हुआ देखा। वे तुरन्त अपना टोप उतार, अभिवादन की मुद्रा मे एक ओर खडे हो गये। उन्होने उस देश के झंडे का मान किया।

इस छोटे से नीतियुक्त सदाचारपूर्ण कार्य ने सम्राट् को इटली का प्रियपात्र वना लिया। इटली निवासियो ने सम्राट् की भूरि-भूरि प्रशंसा की और इतिहास साक्षी है कि इटली निवासियो ने समय आने पर सम्राट् के लिये अपने रक्त की अंतिम बूंद तक चुकाई।

यदि सम्राट् उस झण्डे पर से होकर चले जाते तो क्या वे उन व्यक्तियो के दिलो को जीत सकते थे? क्या वे उनके प्रियपात्र वन सकते थे? तनिक से सदाचार ने वर्षो की दुश्मनी को मित्रता मे वदल दिया।

जीवन मे सदाचार का अत्यधिक महत्त्व है। इस प्रकार के कार्य से आप अपने सम्पर्क मे आने वाले व्यक्तियो के हृदय मे गहरा और निश्चित स्थान वना सकते है। मेरे मुहल्ले मे एक लडका रहता है—मदन। हँसमुख, प्रसन्नचित्त, तकलीफ देखने पर भाग कर सहयोग देने वाला। अहंकार तो उसे छू ही नही गया है। सडक पर किसी अन्धे को देखता है, तो उसे सडक पार करा देता है और फिर प्रसन्नचित्त पूछता है, "दादा! अव तो चले जाओगे न?" वह अन्धा कितना प्रसन्न होता है, उसका रोम-रोम मानो आशीर्वाद देता है। उसने नैतिकता और सदाचार का पाठ भलीप्रकार पढ लिया है और यही कारण है कि उसे सभी प्यार करते हैं।

मेरे ही मुहल्ले मे एक और व्यक्ति रहता है—गिरधर। धनी घर का होने पर भी उद्दण्ड। किसी को कष्ट मे देखकर उसे आनंद आता है। जवान इतनी कर्कश कि कोई उसे मुंह नही लगाना चाहता। जब देखो वह कोई न कोई फितूर वनाये ही रहता है। कक्षा मे वह अध्यापकों को छेड़ने में आनन्द का अनुभव करता है। यदि कोई दुखिया अपरिचित किसी घर का, मोहल्ले का या जगह का रास्ता पूछता है तो उसे उल्टा रास्ता वता देता है, परिणाम यह होता है कि सब उससे बच कर चलने मे ही विश्वास रखते है।

जीवन क्या है ? प्रत्येक चिन्तक ने इसकी अलग-अलग परिभाषाएँ दी है। कन्फ्यूसियस ने नैतिक गुणो का सूक्त, हरबर्ट ने 'सद्-इच्छाओ का पुंज' तो लिकन ने 'संघर्ष क्षेत्र का केन्द्र' बताया है। महात्मा-बुद्ध ने सदाचार का 'मूल', तो महाभारत ने 'नीति का विश्रामस्थल' कहा है। परन्तु सभी ने एक गुण को माना है और वह है, सदाचार। बिना नैतिक नियमो के तथा असदाचारी जीवन को जीवन ही नही कहा जा सकता। महावीर ने कहा है-"प्रभात की मुस्कराहट, चिडियो की चहचहाहट, ओस की स्निग्धता, वायु की लहर, सूर्य का हास्य, ताराओ की क्रीडा, और निशा का मुस्कराना हमे क्यो प्यारा लगता है ? इसलिये, कि इनका अन्त करण शुद्ध है, जीवन पवित्र है, और आत्मा नैतिक नियमो तथा सदाचारपूर्ण कृत्यो से पूर्ण है।"

"हार्पर्स यंग पीकुल" मे एक जगह उद्धृत है-"किसी सुसंस्कृत व्यक्ति को पहिचानने के लक्षण स्पष्ट हैं- वह अपने को भुला कर दूसरो का ख्याल रखता है, वह यथाशक्ति दूसरो की मदद करता है और हर तरह के संगसाथ मे अपने शिष्टाचार, सद्व्यवहार और सदाचार से पहिचान लिया जाता है, उम्र की इसमे कोई कैद नही।"

किसी एक लेखक का कहना है- "अगर मनुष्य हमेशा सदाचार के पथ पर बढता रहे, तो वह धीरे-धीरे अपने सब शत्रुओ पर विजय प्राप्त कर लेता है, वह न केवल मनुष्य के पशुत्व को ही, बल्कि उसके भीतर रहने वाले दानव तक को अपने वश मे कर लेता है।"

सेंटपाल का कहना है कि जिसने जीवन मे नैतिक गुणो को नही अपनाया, उसका जीवन होने न होने के बराबर है। नैतिक व्यक्ति नियमो के पालन के दौरान चाहे कितनी भी बाधाएँ आवें घबराते नही हैं। हरिऔध के शब्दो मे—

देख उत्ताल तरंगो को
कर्म-रत कब घबराता है ।
शक्ति कुम्भज सी धारण कर
पयोनिधि को पी जाता है ।

सदाचारी व्यक्ति के चेहरे से एक अपूर्व-सी आभा प्रतिबिम्बित होती है । बाइबिल की एक पुरानी कहानी है कि एक बार एक व्यक्ति किसी गुरुतर अपराध के कारण स्वर्ग से निकाल दिया गया । जब वह स्वर्ग के दरवाजे से बाहर निकला, तो उसे द्वार पर देवता मिला । उस व्यक्ति ने देवता से पूछा—"वापिस आते समय भगवान् के लिये क्या चीज़ भेंट मे लाऊं ?"

देवता ने उत्तर दिया—"कुछ नही ? स्वर्ग मे आने से पूर्व तुम्हारा जैसा चेहरा था यदि वैसा ही चेहरा बना कर वापिस आ जाओगे, तो प्रभु के लिये वही सबसे बडी भेंट होगी ।"

वस्तुत नैतिकता और सदाचार से हीन व्यक्ति का चेहरा असुन्दर, कठोर और अशिष्ट-सा हो जाता है । वह अपनी स्वाभाविक सुन्दरता खो बैठता है । नैतिकतापूर्ण कार्य ही व्यक्ति को वह आभा प्रदान करते हैं, जो उसके हृदय के प्रतिबिम्ब स्वरूप होती है ।

न्याय-पथ बडा ही कंटकाकीर्ण पथ है । इसके पालन मे पग-पग पर बाधाओ का सामना करना पडता है—

निन्दन्तु नीति निपुणा यदि वा स्तवन्तु
लक्ष्मी समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम् ।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरेवा
न्यायात्पथ प्रविचलन्ति पदं न धीराः ॥

एक विचारक का कथन है कि यदि विश्व-विद्यालयों मे नैतिकता की शिक्षा नही दी जाती, तो फिर क्या आवश्यकता है, ऐसे विश्व-

विद्यालयो की, जिनमे मनुष्य को मनुष्य बनाने की शिक्षा नही दी जाती। विश्व-विद्यालयो का तो सर्वप्रथम यह कर्त्तव्य है कि वे अपने विद्यार्थियो को यह वतायें कि वे कौन है ? किस प्रयोजन से आये है ? और संसार मे उन्हे किस पथ का अनुकरण करना है ?

सदाचार शिष्टाचार का ही परिवर्तित रूप है। तनिक से शिष्टाचार से व्यक्ति जीवन मे अपना कठिन से कठिन कार्य हल कर लेता है—एक उदाहरण पर्याप्त होगा—

बादशाह शाहजहाँ ने औरगजेब को दक्षिण का सूबेदार बना कर दूर भेज दिया था। वह चाहता था कि उसके पीछे उसकी गद्दी का उत्तराधिकारी दाराशिकोह बने, औरंगजेब नही। दाराशिकोह को छोड कर अन्य सभी पुत्रो को उसने दूर-दूर भेज दिया था जिससे दाराशिकोह दरबारियो का प्रियपात्र बन सके।

परन्तु इस बढावे ने दाराशिकोह को मदान्ध कर दिया, वह हर समय गर्व मे चूर रहता था, और दरबारियो तथा राज्य के अमीर-उमरावो से सीधे मुँह बात तक नही करता था।

इसके विपरीत औरंगजेब जब भी दिल्ली आता, वह नियमपूर्वक सभी उमराव-अमीरो के घर पर जाकर सलाम कर आता। कुछ लोगो के यह प्रश्न करने पर कि आप तो बादशाह सलामत के पुत्र हैं, आप क्यो इन के घर सलाम करने जाते हो ? वह बडी नम्रतापूर्वक उत्तर देता कि ये सभी अमीर उमराव उम्र मे मेरे पिताजी के बराबर है, जब मैं पिताजी का सम्मान करता हूँ, तो मेरा यह कर्त्तव्य हो जाता है, कि मै इनका भी सम्मान करूँ।

इसका फल यह होता था कि औरंगजेब के दक्षिण मे रहने पर भी उसके सच्चे हितैषी तथा मित्र दिल्ली के दरबार मे रहते थे, और दरबार के छोटे-से-छोटे संवाद से भी वह परिचित रहता था। वह

सदाचार का पंडित था, और इसी गुण ने उसे हिन्दुस्तान का बादशाह बनने मे मदद दी।

अमेरिका के राष्ट्रपति क्विंसी एक बार बस से कही जा रहे थे। बस मे बहुत भीड थी। उन्होने भीड मे एक हब्शी स्त्री को पिसते देखा, वे तुरन्त खडे हो गये और आदर सहित उस स्त्री को वहाँ बैठ जाने को कहा।

इस छोटी-सी घटना ने क्विंसी को देशवासियो का प्रियपात्र बना लिया।

पश्चिम के विचारक इमर्सन ने लिखा है, कि सदाचार के बीच में वैभव बाधक नही होता। कृष्ण और सुदामा का आख्यान किस से छुपा हुआ है। दोनो सहपाठी थे, घनिष्ट मित्र थे, एक राजा तुल्य था, तो दूसरा रंक परन्तु क्या धन ने दोनो के बीच दीवार खडी की? नही।

जब निर्धनता की थपेड खा गरीब सुदामा कृष्ण के द्वार पर पहुँचे, तो वे दौड़कर द्वार तक आये, उन्हे छाती से लगाया। उनकी आँखो से प्रेम की अजस्र गंगा उमड़ पडी और उसी जल से उन्होंने अपने मित्र के पाँव धोये। चुन-चुन कर कंटक निकाले और अपनी प्रिय रानियो तक से आरती करवाई। इन सब के बीच वे बराबर विनीत बने रहे, एक बार भी उन्होने कदाचार का परिचय नही दिया।

स्वर्गीय महादेव गोविन्द रानाडे एक दिन हाईकोर्ट से पैदल घर जा रहे थे। राह मे उन्हे एक बुढिया मिली। उस बुढिया ने कहा—"बेटा! मेरा बोझ भारी है, जरा उठवा दो न!"

रानाडे ने तुरन्त वह बोझ उठवा दिया।

ईश्वरचन्द्र विद्यासागर ने एक सूट-बूटधारी सज्जन का बैग उसके घर तक पहुँचा दिया था।

गाधीजी तो नैतिकता और सदाचार के साक्षात् प्रतीक थे।

जेल-जीवन के दिन थे। महात्मा गाधी जेल मे बंद थे। बाहर क्या हो रहा है, इसकी खबर सिर्फ पत्रो के माध्यम से ही मिल सकती थी और समाचार पत्र का जेल में बंदियो के पास आना अपराध माना जाता था।

जो सिपाही गाधीजी की निगरानी के लिये तैनात था, वह गाधीजी का परम भक्त था। एक दिन वह पगडी मे छिपाकर ताजा अखबार लाया और बडी प्रसन्नता से वह अखबार उसने गाधीजी को दे दिया।

गाधीजी ने पूछा—"यह क्या है ? कहाँ से लाये हो ?"

"ताजा समाचार पत्र है। बाहर से लाया हूँ ?""क्या जेल-जीवन मे अखबार पढने की छूट है?" "नही श्रीमान्, इसीलिये तो छुपा कर लाया हूँ।" गाधीजी ने वह अखबार फेंक दिया। बोले—"मैं ऐसा कोई कार्य नही करना चाहता, जो नैतिक नियमो के विरुद्ध हो" और उन्होने उस अखबार को आँख उठा कर भी नही देखा।

ये सभी घटनाएँ इस बात की ओर इंगित करती है, कि मानव-जीवन मे नैतिकता और सदाचार का सर्वप्रथम स्थान है। जिसने जीवन क्षेत्र मे आकर नैतिकता, विनयशीलता, शिष्टता का पाठ नही पढा वह मानव होते हुए भी पशु-तुल्य है।

"स्माइल्स" ने एक जगह सदाचार पर लिखते हुए कहा है "सदाचार तो हमारे जीवन की सुन्दर गोद है, जिससे हमारा पूरा जीवन खिल उठता है।"

नैतिक पूर्ण कृत्य हमारे चेतन और अचेतन मन का सेतु है। बर्ट्रेंड रसेल ने एक स्थल पर लिखा है—"चेतन और अचेतन मन मे समन्वय न होने के कारण व्यक्ति के भीतर विश्रृंखलता आती है। व्यक्ति और समाज के बीच ऐक्य का अभाव तब होता है जब दोनो वस्तुपरक रुचियो

और स्नेह-संबंधो की शक्ति से एक दूसरे से जुड़े नही रहते। सुखी मानव वही है, जो एकता की इन असफलताओ से पीडित नही है, जिसका व्यक्तित्व न तो भीतर से विच्छिन्न है और न ही संसार से युद्ध करने मे लगा हुआ हे। ऐसा मानव अपने को विश्व-नागरिक अनुभव करता है। वह विश्व के वैभव का उपयोग करता है और मृत्यु का विचार उसे आक्रान्त नही कर पाता, क्योकि वह वस्तुत आगे आने वाली मानवता मे अपने को प्रथक् नही मानता।"

शेक्सपियर ने जीवन को क्षणिक मानते हुए परामर्श दिया है– "सदाचारपूर्ण कृत्य ही इस क्षणिकावस्था को विस्तार मे परिवर्तित कर सकता है।"

"Our life is short but to expand that span to vast eternety is virtue's work"

नैतिकता और सदाचार का समन्वय ही वह दिव्य रत्न है, जिसकी ज्योत्स्ना से संपूर्ण जीवन जगमगाने लगता है। गीता ने इसी समन्वय को 'समत्व' कहा है—

योगस्थ कुरुकर्माणि, संगं त्यक्ता धनजय
सिद्ध्य सिद्ध्यो समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते।
बुद्धि युक्तो जहातीह उभे सुकृत दुष्कृते
तस्मायोगाय युज्यस्व योग. कर्मसु कौशलम्॥

यह सन्तुलन मनुष्य स्वयं ला सकता है। नैतिकपूर्ण निर्णय मानव को जन्म से ही प्राप्त नही होते, अपितु इसका अभ्यास समय व परिस्थितियाँ मानव को करा देती हैं और जिस व्यक्ति मे नैतिक-अनैतिक कार्यो मे भेद करना आ गया, वह श्रेष्ठ मानव कहा जा सकता है।

सी०जी० लारसन की निम्न प्रतिज्ञाएँ नैतिक और सदाचार के मर्म को समझने में अत्यन्त सहायक होगी—

"मै अहं को पास तक नही फटकने दूंगा ।
"मै अबसे अधिक महान् बनूंगा ।
"मैं जीवन मे अधिक सफलता प्राप्त करूंगा, क्योंकि मैं जानता हूँ कि सदाचार और नैतिकता मेरे साथ है ।
"मै अपने मे तथा हर दूसरे मे केवल अच्छाई ही देखूंगा ।
"विपत्तियाँ आने पर मैं दुगनी शक्ति का प्रयोग करके दिखाऊंगा मैं हर विपत्ति को सुअवसर बना कर छोड़ूंगा ।
"मैं केवल उन्ही की कामना करूंगा, जिनसे मानवता, सत्य व स्वतन्त्रता के पथ पर अबाध गति से आगे बढ सके ।
"मैं सदा वे ही शब्द कहूँगा, जिनसे साहस, प्रेरणा व प्रसन्नता मिल सके ।
"मैं सदा वे ही कार्य करूंगा, जिनसे जनता का उपकार हो सके ।"

युवक बन्धुओ ! निराश मत होओ, जब एक कुम्भकार विशिष्ट क्रियाओ से मिट्टी को अपनी इच्छानुसार भाजन का रूप दे सकता है, तो क्या तुम अपने विचारो और विश्वासो को अपने मनोनुकूल नही ढाल सकते ।

तुम्हे अपने सामर्थ्य पर विश्वास होना चाहिये, भाग्य के सामने झुकना नपुंसको का कार्य है । जवानी न कभी हारी है, और न हारना जानती है । वह कभी विवशता से झुकी भी नही । अपने हाथो मे नैतिकता और सदाचार की ढाल लो, कोई भी विपत्ति तुम्हारा कुछ भी नही बिगाड सकती । उठो ! भाग्य के दास नही, उसके स्वामी बन कर जीओ । ऐसा कार्य करो कि मानवता के इतिहास मे तुम्हारा नाम अमर हो जावे । उठो ! सामने देखो, सुअवसर, नैतिकता और सदाचार तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे है ।

●

# आत्म-विश्वास

आत्म-विश्वास जीवन की सर्वोच्च सिद्धि है, एक अटूट विश्वास और महान् शक्ति है, यह वह फौलादी ताकत है जो आँधियो को चीर दुर्गमताओ को भी सुगम बना देती है। आधुनिक मनोवैज्ञानिको के अनुसार मनुष्य अपने आत्म-विश्वास से अलौकिक कार्यों को भी संभव कर सकता है, दु:साध्य कार्यो को साध्य किया जा सकता है, अजेय दुर्गों को चुटकियो मे विजय किया जा सकता है, दुर्गम जंगलो की छातियो पर पगडण्डियाँ बना कर उस पर अपने अमिट चरण-चिन्ह छोड सकता है। जीवन मे सफलता के लिये आत्म-विश्वास एक सर्वोच्च सिद्धि, और सफलता का प्रथम सोपान है।

मुनि श्री बुद्धमलजी ने कहा है—"युवक! जीवन की अँधेरी गली मे आत्म-विश्वास का प्रकाश साथ लेकर चलो। तुम्हारे सामर्थ्य के सामने कोई भी कार्य असंभव नही है। केवल तुम्हे अपने सामर्थ्य मे दृढ-विश्वास होना चाहिये। जब तक यह विश्वास पैदा नही हो जाता तब तक सभी कार्य असंभव ही रहेगे। जीवन मे मिलने वाली बहुत-सी असफलताओ का मूल कारण आत्म-विश्वास की कमी ही होना है। तुम अपनी शक्ति मे अखण्ड विश्वास करो, इसके सहारे तुम्हारी अन्य सुप्त शक्तियाँ भी जागरित हो उठेंगी, वस्तुत शक्ति का विश्वास ही शक्ति से भरा हुआ है।

वे मनुष्य कितने कमजोर है, जिन्हे अपनी शक्ति पर विश्वास नही होता। वे किसी भी कार्य मे हाथ डालते सकुचाते है। असफलता का भय कभी उनका पीछा छोडता ही नही, वे किसी भी क्षेत्र मे दृढता के साथ अपना अधिकार घोषित नही कर सकते। स्वयं पर अविश्वास

करने की यह प्राणान्तक भूलें उन्हे समाज मे कभी आगे नही आने देती ।

वैंजामिन डिजरायली ने स्पष्ट कहा है, "मनुष्य परिस्थितियो का दास नही, परिस्थितियाँ ही उसकी दास है ।" यह तभी संभव है कि जब मानव अपने अन्दर के सुप्त विश्वास को पहिचान ले । एक उदाहरण ही पर्याप्त होगा—एक वार एक सिह-शिशु जगल मे खेल रहा था । माँ पास ही पडी-पडी विश्राम ले रही थी । खेलते-खेलते सिह-शिशु काफी दूर निकल गया, उसे ध्यान ही नही रहा कि वह कहाँ आ पहुँचा है । वह व्यग्र-सा इधर-उधर भटक रहा था ।

थोडी ही दूर जाने पर उसे सियारनी दिखाई दी, उसके वच्चे मर चुके थे । उसने शेर के वच्चे को भटकते देखा तो उसके हृदय मे वात्सल्य उमड आया और वह उस वच्चे को प्यार से पुकारकर अपने घर ले गई, उसे दूध पिलाया, रात को अपने साथ ही सुलाया, और धीरे-धीरे सिह-शावक की घवराहट दूर हो गई ।

धीरे-धीरे वह शेर का वच्चा इतना वडा हुआ कि वह सियारनी भी उसे देख कर डरने लगी, परन्तु फिर भी सशंकित-सी उसके साथ जगल मे विचरण करती रहती, उसके साथ पास-पडौस के अन्य सियारो के वच्चे भी होते ।

एक दिन जगल मे इन सव ने एक मदमत्त हाथी को अपनी ओर ही सवेग आते देखा, और सामने की पहाडी पर से किसी अन्य शेर की भयकर गर्जना सुनाई दी । ऐसी दहाड सुनकर सियारनी तो मारे भय के थर-थर काँपने लगी, अन्य सियारो के नवजवान भी दुम दवाकर भाग खडे हुए परन्तु वह शेर का नवजवान पट्ठा वही पर दृढ चट्टान की तरह अटल रहा । उस दहाड को सुनकर उसके हृदय मे विचित्र संवेग जागरित हुए, उसे अपनी वश-परम्परा का एकाएक स्मरण हो आया और लपक कर उस भीमकाय क्रुद्ध हाथी की सूँड

पर चढ़ बैठा, और अपने तीक्ष्ण नखो, और पैने दांतो से लहूलुहान कर परास्त कर दिया। अन्त मे जब सूँड कटा हाथी चिघाडता हुआ भाग खडा हुआ तो वह सिह-युवक भी दूर खडी सियारनी को दुख भरी नजरो से ताकता हुआ दहाड़ मार कर जंगल मे जा सिहो के समूह मे शामिल हो गया।"

स्पष्ट है कि वह सिह-शिशु इतने दिनो तक अपने आत्म-विश्वास को भूला-सा रहा। उसे यह ध्यान ही नही रहा कि वह वन-राज-पुत्र है। वह अपने आप को सियारनी का साधारण पुत्र ही समझे बैठा रहा और तब तक उसकी श्री, शोभा, हिम्मत, मर्दानगी और जोश सब कुछ श्रीहीन से पडे रहे। परन्तु जंगल के छोर से आई शेर की दहाड ने उसके स्नायु-जाल तक को हिला डाला, उसे यह स्मरण करा दिया कि तुम मे मात्र सियारनी के बच्चे जितनी ही शक्ति नही है, अपितु इससे भी कुछ बढचढकर है। तुम सिर्फ सियारनी के होले मे ही घूमने के लिये पैदा नही हुए हो, अपितु तुममे जंगल का राज्य सम्भालने की शक्ति है। सिह अपने भुजबल की ताकत से राज्य प्राप्त करता है, माँग कर नही। सूर्यमल्ल मिश्रण के अनुसार—

> "सिहा देस-विदेश सम सिहा किसा उतन्न।
> सिह जिका वन संचरै, वै सिहा रा वन्न॥"

और उसके हृदय मे जगे आत्म-विश्वास की ताकत से वह कही का कही पहुँच गया।

आज का मानव भी ठीक उसी सिह के बच्चे की तरह है, जिसमें आत्म-विश्वास कूट-कूट कर भरा हुआ है, उसमे बहुत कुछ कर गुजरने की क्षमता है, परन्तु अभी तक वह अपने आप से अपरिचित है, उसे यह ज्ञान ही नही है कि वह कितना महती, शक्तिशाली, सामर्थ्यवान और विलक्षण है, उसके भीतर का शेर सोया हुआ है। आवश्यकता है एक ऐसे दहाड की, ऐसे अवसर की, जो उसके अन्तर्मन

को झकझोर कर जगा सके। आवश्यकता है, एक ऐसे स्पर्श की, जो उसकी छिपी हुई शक्तियो को जगा सके, और जब उसके भीतर का शेर दहाड मार कर उठ खडा होगा तो वह स्वयं यह अनुभव कर आश्चर्यान्वित होगा कि वह कितना ऊँचा, हिम्मती और क्षमतावान है। प्रसिद्ध इंग्लिश लेखक स्वेट मार्टेन के अनुसार-अपने भीतर के महान् व्यक्तित्व को जगाने का प्रयत्न करो। आजतक तुमने ऐसा नही किया। उठो, अपने जीवन की योजना बनाओ ताकि तुम्हारी महान् शक्ति और प्रतिभा, जो अब तक बेकार पडी है, फिर से जाग उठे। तुम उन सब शक्तियो को जानते हो और कभी-कभी उनका अनुभव भी करते हो। तुम्हारी अन्त प्रेरणा तुम्हे यह बताती है कि तुममे इससे भी महान् व्यक्ति छिपा हुआ है। तुम उसे क्यो नही पहिचानते? क्यो नही जगा लेते?"

स्वय को हीन और अयोग्य समझने वाले कितने मनुष्य ज्यो ही अपनी महानता को पहचान पाए वे नीचे से एकदम ऊपर उठ गये, शत्रु न रहकर वे समाज के मित्र बन गये। नयी स्फूर्ति जगाने वाली यह आँच यदि उन लाखो सोई हुई आत्माओ को छू पाए जो स्वय को हीन समझ कर दुर्बलताओ मे जीवन बिता रही है—तो मानवता का कितना कल्याण हो।

जो मनुष्य जीवन-क्षेत्र मे इस विश्वास के साथ उतरते हैं, कि सफलता उनके साथ है, आत्म-विश्वास उनका बन्धु है, और विजय उसकी चिरसंगिनी है, वह चाहे कितनी ही बाधाएँ आवें, अन्तत जीत कर ही रहता है। असफलता को उसके चरणो मे झुकना पडता है, और कठिनाइयो, बाधाओ एव विपत्तियो को उसके सामने परास्त होना पडता है और उसे अपने लक्ष्य तक पहुँचने मे कोई भी शक्ति बाधक सिद्ध नही होती।

"मैं एक दिन इंग्लैड का प्रधान मन्त्री बनूँगा, और बन कर रहूँगा।" बेंजामिन डिजरायली के ये शब्द सुनकर लार्ड मेलबोर्न जोरो

से हो–हो कर के हँसा और बडी देर के बाद जब हँसी थमी, तो उसने कहा–"तुम ! और इंग्लैंड के प्रधान मन्त्री ? इतना ऊँचा स्वप्न मत पालो नवयुवक ! धरती पर पाँव टिकाते हुए आसमान को छूने की बातें करना महज पागलपन है।"

परन्तु वह अपने विचारो पर दृढ रहा, उसने अपना लक्ष्य स्थिर कर लिया था। एक साधारण मध्यम यहूदी वर्ग मे पला, नवयुवक जिसके पास न तो भव्य व्यक्तित्व (Personality) और न किसी उच्च विद्यालय की पदवी। उसके सहपाठी उसे विदेशी और यहूदी समझ-कर घृणा करते, तो आस-पास के व्यक्ति उसकी ऊँची बातें सुनकर व्यंग से मुस्कराते। परन्तु इतने से भी क्या वह व्यक्ति हताश हुआ? नही। वह और दूने जोश से लक्ष्य तक पहुँचने के प्रयत्न करने लगा। भले ही उसके पास और कुछ नही था, परन्तु उसका हृदय आत्म-विश्वास से लबालब भरा हुआ था, जिसके सहारे वह निरन्तर गतिशील बना रहा।

जीवन-क्षेत्र मे प्रविष्ट होने पर पहले ही पडाव पर उसने जबरदस्त ठोकर खाई। व्यापार मे उसे जबरदस्त घाटा उठाना पड़ा, उसने व्यापार का क्षेत्र अपने अनुपयुक्त समझा, वह शिक्षा के क्षेत्र मे घुसा, तो मात्र यहूदी होने के अपराध मे उसे प्रत्येक शिक्षाघर के दरवाजे बन्द मिले और कही पर भी जाना सम्भव न रहा। राजनीति मे उसने स्थान बनाना चाहा, तो पग-पग पर उसे बवण्डर एवं विरोधो का सामना करना पडा। संसद-सदस्य बनने मे उसे इसलिए असफलता मिली कि वह विदेशी और यहूदी है और पिछले डेढ़ सौ वर्षो के इतिहास मे कोई भी यहूदी संसद-सदस्य नही बना था। परन्तु इन सब असफलताओ से उसके चरण डिगे नही, वह अटल रहा, अजेय रहा, विरोधो की आंधियो ने उसे फौलाद बना दिया और वह पूर्ववत् ही इंग्लैण्ड के प्रधान मन्त्रित्व का स्वप्न अपनी आंखो मे पाले रहा।

लार्ड मलवर्न ने उसे एक बार फिर समझाया और सलाह दी कि राजनीति उसके लिए असाध्य है, और प्रधानमन्त्रित्व उसके लिए मृग-मरीचिका। इससे तो अच्छा है कि वह कही पर छोटी-मोटी नौकरी करले और अपने भावी जीवन को सुखमय बनाने का प्रयत्न करे, परन्तु वह विचलित नही हुआ, वह अपने विचारो और विश्वास को असाध्य नही समझ रहा था, उसे विश्वास था, कि वह अन्तत अपनी अभीष्ट सिद्धि हस्तगत करके रहेगा। वह पूर्ववत् अपने लक्ष्य की ओर गतिशील रहा और अन्त मे प्रबल विरोध, संघर्ष एवं कशमकश के बीच संसद-सदस्य बनने मे सफल हो ही गया।

परन्तु यहाँ पर भी विपत्तियो ने उसका साथ नही छोडा था। विरोधी पक्ष हर सम्भव तरीको से उसे नीचा दिखाने की ओर प्रयत्नशील रहे। जब वह पहली बार ससद् मे बोलने के लिये उठ खडा हुआ, तो इतना हो-हल्ला मचा कि उसे चुप हो जाना पडा। हो-हुल्लड शान्त हो जाने पर उसने कहा—"आज तो मैं बैठ जाता हूँ परन्तु एक दिन वह आने वाला है जब तुम्हे बाध्य होकर मेरा भाषण सुनने के लिये विवश होना पडेगा।"

इतिहास साक्षी है, कि अपनी धुन का पक्का बैंजामिन डिज्रायली अन्त मे इङ्गलैण्ड का प्रधानमन्त्री बना। उसे विदेशी और यहूदी कहनेवाली अंग्रेज जाति को उसका नेतृत्व स्वीकार करना पडा और उसने वह सब कर दिखाया, जो उसने प्रारम्भ मे निश्चय किया था।

क्यो ? यह सब क्यो और कैसे हुआ ? तो इसका एक मात्र सीधा और सरल उत्तर यही है कि उसके पास आत्म-विश्वास के अमूल्य रत्न थे, जिसके प्रकाश मे वह निरन्तर अपने लक्ष्य की ओर बढता रहा। उसके जीवन मे निराशा की घडियाँ भी आई, पराजय का मुँह भी देखना पडा, और असफलताओ से भी जूझना पडा, परन्तु वह हताश

नही हुआ, अपने विचारो से विचलित नही हुआ। हर निराशा ने उसे नया पाठ पढाया, प्रत्येक असफलता ने उसके पावो को दृढ़ता प्रदान की, और प्रत्येक पराजय ने उसके विश्वास को स्थायित्व दिया। आत्म-विश्वास सदैव उसके साथ रहा और इसी के फलस्वरूप वह साधारण-सा विदेशी यहूदी बालक इङ्गलैण्ड के प्रधान-मन्त्री के पद तक पहुँच सका।

प्रो० कैनेडी के अनुसार "इतिहास की धारा न हमारे पक्ष मे है और न उनके बल्कि यह तो दृढ संकल्प और आत्म-विश्वासी वीर पुरुषो के हक मे है।" इङ्गलिश विद्वान् वी. वी के अनुसार "आत्म-विश्वास की कमी ही हमारी बहुत सी असफलताओ का कारण होता है। शक्ति के विश्वास मे ही शक्ति है : वे सबसे कमजोर है चाहे वे कितने ही शक्तिशाली क्यो न हो, जिन्हे अपने आप तथा अपनी शक्ति पर विश्वास नही है।"

मनोविश्लेषण शास्त्री मानव को शक्ति का विराट् पुंज मानते हैं। उनके अनुसार प्रत्येक मानव मे एक-सी ही शक्ति और प्रबल विराटता होती है। केवल स्थान, काल और परिस्थितियो के अन्तर से ही मानव-मानव का भिन्न व्यक्ति और विकास होता है। सही दृष्टियो मे प्रत्येक मानव मे लिंकन, लेलिन, गांधी, सिकन्दर, नैपोलियन जैसे व्यक्तियो के तत्त्व छिपे हुए हैं, आवश्यकता है, उन्हे पहिचानने की, पहिचान कर परखने की और परख कर उन्हे ऊँचा उठाने की। जो व्यक्ति इस छोटी-सी बात को समझ लेता है, वह कभी भी निराश नही होता, उसे कभी भी असफलता का मुँह नही ताकना पड़ता।

टेनीसन ने कहा है—"आत्म-विश्वास, आत्म-ज्ञान, और आत्म-संयम केवल यही तीन जीवन को परम शक्ति सम्पन्न बना देते हैं।" एमर्सन के अनुसार "आत्म-विश्वास ही पराक्रम का सार है," तो स्वामी विवेका-

नन्द के मतानुसार-- "आत्म-[illegible] दूसरा मित्र नहीं । आत्म-विश्वास ही भावी उन्नति की प्रथम सीढ़ी है।" नोबुल पुरस्कार विजेता डा० एलेक्सिज कैरेल ने भी मानव की महत्ता को स्वीकार करते हुए कहा है कि "पदार्थ की दुनिया यद्यपि अत्यन्त विराट् है, परन्तु आदमी के लिये जैसे वह भी छोटी है, आर्थिक और सामाजिक परिस्थितियो के समान वह भी उसके लिये उपयुक्त नही बैठती ।" गणित के अनुमानो से मनुष्य अणु और तारको के भेद को भी समझ सकता है । जिस वस्तु से पर्वत, सागर और सरिताओ का निर्माण हुआ, मनुष्य का निर्माण भी उसी से हुआ है ।

आत्म-विश्वास मानव का अटूट खजाना और अमूल्य सम्पत्ति है । जिस मनुष्य के पास इस प्रकार की पूंजी संग्रहीत है, वह जीवन मे कभी भी हताश, निराश और दुखी नही हो सकता । वह इस सम्पत्ति के बदौलत कही भी जा सकता है, सफलता के किसी भी द्वार से वह बे-रोक-टोक जा सकता है । आत्म-विश्वास तो एक ऐसा दिव्य चमत्कार है जिसके प्रकाश मे उसका व्यक्तित्व शतशत रूपेण निखर उठता है । आत्म-विश्वास एक ऐसी दिव्य शक्ति है, जिससे मानव सहस्र-गुना बलशाली और स्फूर्तिवान् हो जाता है । जिसके हृदय मे आत्म-विश्वास का दिव्य प्रकाश है, वह दुर्गम से दुर्गम पर्वतो को लाँघ सकता है, समुद्र की छाती चीर कर अमूल्य रत्न निकाल सकता है, अन्तरिक्ष मे साधार लटक कर ब्रह्माण्ड के दर्शन कर सकता है और सम्पूर्ण राष्ट्रानुयायियो को अपने पीछे चलने के लिये विवश कर सकता है और वह चाहे तो जीवन की सर्वोच्च सिद्धि प्राप्त कर सकता है ।

महान् लिंकन्, लेनिन, स्टालिन, हिटलर, नासिर, गाधी, टीटो, सुकार्नो, वीवर बुक, राकफेलर आदि हजारो महापुरुषो और नेताओ

के पास न तो अटूट सम्पत्ति थी, और न उच्च वर्ग की प्रतिष्ठा ही। इनमें से कोई दरिद्र था, तो कोई साधन हीन साधारण मानव। कोई साधारण से कारीगर का बेटा था, कोई निर्धन किसान का साधन-हीन पुत्र। परन्तु यदि इन सब व्यक्तियो की जीवनियो का अध्ययन किया जाय, तो सभी विभिन्नताओं के बीच मे एक तार अवश्य ऐसा जुड़ा हुआ दिखाई देगा, जो सभी मे समान था, और वह तार था आत्म-विश्वास। आत्म-विश्वास ने ही उनके जीवन-पथ को सदैव जगमगाये रक्खा, आत्म-विश्वास के वरदान से ही वे सदैव निरंतर गतिशील रहे।

आप भी अपने गन्तव्य तक पहुँच सकते है। आप भी अपने स्वप्नो को साकार रूप दे सकते है, आप भी महानता और प्रसिद्धि के शिखर तक पहुँच सकते है। यदि आपकी आर्थिक स्थिति ठीक नहीं है तो ये महापुरुष भी धनवान नही थे, यही नही, इनमे से कई-कई तो दो जून भर पेट रोटी प्राप्त करने मे कठिनाई अनुभव कर रहे थे। यदि आपके पास किसी उच्च विश्व-विद्यालय की सनद नहीं है तो इन्हे भी कोई उच्च शिक्षा सहज सुलभ न थी। यदि आप किसी निर्धन कारीगर या किसान के पुत्र है, तो ये भी कोई उच्च प्रतिष्ठित कुल मे पैदा नही हुए थे। परन्तु फिर भी ये सभी सफल होकर रहे, क्योकि इनको अपने विश्वासों पर विश्वास था। इनके पास दृढ इच्छा-शक्ति, विराट् लगन और महती जीवन जीने की ललक थी। असफलताओं से लड़ने की इनमें क्षमता थी, और अपनी योग्यता पर अटल विश्वास था। उनमें हीनता की भावना नही थी अपितु अग्रसर होने की प्रबल चाह थी। ये विशृंखल नही थे, अपितु इन्हे अपने विचारो और विश्वासो पर अटल निष्ठा थी। उनके जीवन का अमूल्य गुण आत्म-विश्वास का कटोरा लबालब भरा हुआ था, जिसके फलस्वरूप वे अपने साथियो से आगे बढ सके, और जीवन में अपने लक्ष्य तक पहुँचने मे सफल हो सके।

भिक्षु आनन्द ने एक बार महात्मा बुद्ध से पूछा—प्रभु! आपने इतने बडे राज्य, सम्पत्ति और ऐश्वर्य को छोडकर जो साधारण से काषाय वस्त्र पहिन, शिर को मुण्डित कर साधु बन गये और देखते-देखते प्रसिद्धि के सर्वोच्च शिखर पर चढ बैठे इसके पीछे कौनसी शक्ति कार्य कर रही है ?

महात्मा बुद्ध क्षण भर को मुस्कराये। बोले—"बेटा आनन्द! यदि एक ही शब्द मे कहना चाहूँ तो वह शक्ति थी–आत्म-विश्वास। आत्म-विश्वास ही वह प्रकाश है, जिसके उजाले मे मानव निर्द्वन्द्व, निर्विघ्न भाव से ईश्वर तक पहुँच सकता है।" महात्मा गाधी ने भी एक बार अपनी प्रार्थना सभा मे कहा था—"मैं जो कुछ करता हूँ, या किया है, या भविष्य मे करूँगा, उसके पीछे जहाँ मेरी अन्त करण की शुद्धता है, वहाँ साथ ही साथ आत्म-विश्वास भी विद्यमान रहता है।"

कोरिया का युद्ध-क्षेत्र! अमेरिका की आठवी सेना हताश, निराश-सी प्रकृति से विपदग्रस्त थी। सैनिको का उत्साह टूट गया था। सेना नायक परेशान थे, उन्हे कोई राह नही सूझ रही थी। आगे बढना उनके लिये असंभव-सा हो गया था, और पीछे हटने की योजना बनाने मे वे सलग्न थे। ऐसे ही समय मे अमेरिकी फौज के नये सेनाधिपति जनरल रिजवे ब्रिगेड चौकी का निरीक्षण करने गये। सेनाधिकारियो ने उनका स्वागत-सत्कार करने के पश्चात् वह योजना उनके सामने रख दी, जो संगठित रूप मे पीछे हटने के लिये बनाई गई थी। परन्तु जनरल रिजवे ने एक बार भी उस ओर नही देखा और कहा—"मुझे पीछे हटने की योजनाओ मे दिलचस्पी नही है, हाँ! यदि शत्रु-पक्ष पर आगे बढकर आक्रमण करने की कोई योजना हो, तो मैं उस पर विचार करने के लिए तैयार हूँ। मैं सिर्फ एक बात जानता हूँ—आक्रमण, अग्रयान और विजय।" जनरल रिजवे के इन शब्दो ने जादू का काम किया, इसके पीछे जो उसका आत्म-विश्वास मुखरित हो

रहा था, उसने सैनिको मे नया उत्साह भर दिया, उसके अर्थ ने सेना-नायकों मे संजीवनी का कार्य किया। कुछ ही सप्ताहो के बाद अखबारों के मोटे-मोटे शीर्षको मे उस टोली के विजय समाचार छपने लगे और एक दिन उसने पूर्ण विजय प्राप्त कर गौरवान्वित किया।

भगवान् श्रीकृष्ण ने श्रीमद्भागवत मे स्पष्ट कहा है, कि हमारा जीवन एक युद्ध-स्थल है, उसमे जीत उसी की होती है, जो हथियार डाल देने की अपेक्षा विपत्तियो से डटकर मुकाबला करते है, जो किसी भी संकट मे विचलित नही होते और जो प्रत्येक बाधा को हँसकर गले से लगाते है। जिनका आदर्श और लक्ष्य 'विजय' है, वे सदैव 'विजयी' हैं, हमेशा सफल हैं।

वही मानव सफल हो सकता है जिसे स्वयं पर विश्वास होता है, जो अपने आप से अनभिज्ञ है, वह जीवन मे कभी भी सफल नही हो सकता। प्रसिद्ध यूनानी दार्शनिक सुकरात ने एक मन्दिर की दीवार पर खुदवाया था—"अपने आपको पहिचानो" इन दस अक्षरों में सुकरात ने अपने जीवन का अनुभव संग्रहीत कर रख दिया था। मानव जब अपने आप को पहिचान लेता है, तभी वह महत्कार्य सम्पन्न कर सकता है। सारी प्रकृति उसकी मुट्ठी मे समा जाती है। वह अस्त-व्यस्त समाज को सुव्यवस्थित रूप देने में समर्थ हो जाता है, परिस्थितियो को अपने मनोनुकूल बना लेता है। जब वह स्वयं की महत्ता को पहिचान लेता है, तो फिर नीरस जीवन नही जीता, अपितु उसकी आँखों में एक विशेष प्रकार की चमक आ जाती है। उसके चरणों मे बिजली भर जाती है। मुँह पर मुस्कानों की बहार आ जाती है। वह जिधर भी जाता है, हजारों उसके साथी बन जाते है, परन्तु इससे पूर्व मानव के लिये यह आवश्यक है, कि वह अपने आप में स्वयं को पहिचानने की क्षमता उत्पन्न करे।

आत्म-विश्वास मानव-जीवन की कसौटी है। उसका प्रत्येक चरण आगे की ओर ही बढता है। महान् विपत्तियो से जूझते हुए भी कोलम्बस ने उस दिन भी, जिस दिन उसे विश्वास हो गया था, कि उसे खीझे हुए उसके साथी और मल्लाह उठा कर समुद्र मे फेंक देंगे—अपनी डायरी मे लिखा था, आज भी हम आगे की ओर बढे, आज भी लक्ष्य तक पहुँचना हमारा अभीष्ट रहा। सही अर्थों मे आत्म-विश्वास दृढता और धैर्य की साकार मूर्ति होता है। असफलता की तो वह कल्पना ही नही करता। साहस उसका हितैषी होता है, दृढता उसका बन्धु और सफलता उसकी जीवन सहचरी। वह निष्क्रिय बैठा नही रहता, अपितु सदैव संघर्षशील रहता है। वह तब तक संघर्ष जारी रखता है, जब तक कि उसे अभीष्ट सिद्धि की प्राप्ति नही होती।

अपने पशु-जीवन से मानव जो इतनी उन्नतावस्था मे पहुँचा है, उसके पीछे उसका आत्म-विश्वास ही तो साकार रहा है। आज हम जो वैज्ञानिक साधनो का उपयोग ले रहे हैं, वे वस्तुत वैज्ञानिको और आविष्कारको की ही देन हैं, जिन्हे अपने सिद्धान्तो पर अटल विश्वास था, अपने आविष्कारो की सचाई पर यकीन था, और जो स्वयं हजारो कष्ट सह विपत्तियो से जूझ कर अपने लक्ष्य तक बढे, उन सबके पीछे उनके जीवन की अटूट आस्था विद्यमान थी। वैज्ञानिक और आविष्कारक भोग-विलास को परे धकेल कर संकटो को न्यौता देते हैं। विपत्तियो से जूझना अपना कर्त्तव्य समझते है, क्यो ? केवल इसलिये कि उन्हे अपने सिद्धान्तो पर अटूट विश्वास होता है, वे उसमे छिपी सत्यता को स्पष्टत देखते है और वे उस सत्यता को साबित करने के लिये प्रयत्नशील होते हैं।

प्रथम महायुद्ध के समय ब्रिटिश वायुसेनाधिकारियो मे इसलिये खलबली मच गई थी कि उनके रण-व्यूह मे दरार-सी पडती दिखाई

दे रही थी। ब्रिटिश वायुयान उड़ान करते समय सहसा चक्कर खाकर नीचे गिर जाते और करोड़ो रुपयो का व्यर्थ मे नुकसान हो रहा था। अन्तत सरकार ने इस निराशा का सही हल निकालने के लिये तरुण वैज्ञानिक फेड्रिक लिडेमन को नियुक्त किया। लिंडेमन ने कई दिनो के गहन चिन्तन के पश्चात् निष्कर्ष निकाला कि यदि वायुयान को उस समय, जबकि वह चक्कर खाकर नीचे गिर रहा होता है, उसका चालक उसे ऊपर उठाने की कोशिश न कर उसे और भी वेग से नीचे ले जाने की चेष्टा करे, तो विमान नीचे गिरने के स्थान पर ऊपर उठने लगेगा। लिडेमन के इस सिद्धान्त को सुनकर लोग जोरो से हँसे, कुछ लोगो ने उस पर फब्तियाँ कसी, कुछ ने व्यंग मे उस पर मुँह पिचकाये, परन्तु वह अपने सिद्धान्त पर अटल रहा।

लिडेमन ने सिद्धान्त तो प्रतिपादित कर लिया और उसकी सत्यता जाँचना आवश्यक था। इस सत्यता को जाँचने के लिये कोई चालक तैयार नही हुआ। कौन मूर्ख था, जो जान-बूझकर मृत्यु के मुँह में जाय। आखिर लिंडेमन ने स्वयं इस सत्यता को स्पष्ट करने का बीड़ा उठाया, परन्तु उसे वायुयान चलाने का अभ्यास नही था। उसने दो महीने कठिन परिश्रम कर वायुयान चलाने की शिक्षा ली और एक दिन अपने सिद्धान्त को सत्यता का रूप देने लिये परीक्षण की घोषणा कर दी।

आखिर वह दिन भी आ पहुँचा, जब लिडेमन ने उस सिद्धान्त को परखने का निश्चय किया। लाखो की संख्या मे भीड एकत्र थी। देखते ही देखते लिडेमन ने वायुयान को १८ हजार फुट की ऊँचाई पर उठाया पर तुरन्त ही वायुयान चक्कर खाकर सवेग पृथ्वी की ओर झपटा। लिडेमन ने उसकी गति दूनी कर दी। लोगो की साँस थम गई और ऐसा लगने लगा कि कुछ ही क्षणो मे विमान पृथ्वी मे टकराकर नष्ट-

भ्रष्ट हो जायगा। परन्तु एकाएक लोगो ने देखा कि वायुयान एकाएक सीधा होकर आगे की ओर बढ गया। लिंडेमन के सिद्धान्त की पुष्टि हो गई थी। जब वह वायुयान से सकुशल वाहर आया तो इंग्लैण्ड वासियो ने उसे हाथों-हाथ उठा लिया। वायुसेना के एक उच्च-अधिकारी ने उससे पूछा कि जब वायुयान पृथ्वी की ओर झपट रहा था, तब तुम डरे नही? लिंडेमन मुस्कराया और बोला, महोदय! मुझे मेरे सिद्धान्त पर भरोसा था, और अपने आत्म-विश्वास पर अटूट आस्था थी फिर घबराना कैसा?

लिडेमन की तरह अन्य कई वैज्ञानिक अपने प्रयोगो को सिद्ध करने के लिये प्राणो को सकट की धधकती हुई ज्वालाओ मे फेंक देते है, परन्तु अन्तत वे सफल होते है और पुन उस अग्नि से फौलाद बनकर निकलते है। इन सबके पीछे उनका पथ-प्रदर्शक एक मात्र आत्म-विश्वास रहता है।

विशाल वट-वृक्षो का रूप एक नन्हे से बीज मे सुरक्षित छिपा हुआ है। ठीक इसी प्रकार विश्व मे जन्म लेने वाले प्रत्येक बालक पर घटित है। उसमे भी सभी सभावनाएँ विद्यमान् है जो एक कुशल प्रशासक, वैज्ञानिक, कलाकार या विद्वान् मे है, आवश्यकता है, उचित वातावरण की जिसमे वे सभी सभावनाएँ पनप सकें।

जो कुछ आप कर रहे है उससे भी सहस्र गुना शक्ति, कार्य-क्षमता आप मे है परन्तु आप अपनी महत्ता से सर्वथा अपरिचित है। इमर्सन के अनुसार 'बहुत कम लोग मृत्यु से पूर्व अपने आप को पहिचान पाते है, बहुत कम व्यक्ति अपने जीवन की सभी शक्तियो का उपयोग कर सकते है और जब उन्हे अपने सामर्थ्य का भान होता है, तो एक बारगी ही कसमसा कर वह कार्य कर गुजरते है, जो वे असम्भव-सा समझते है।'

श्री राम समुद्र के किनारे चिन्तातुर बैठे थे। वे समुद्र पार बैठी अपनी पत्नी सीता का सन्देश प्राप्त करना चाहते थे परन्तु इसके बीच मे

बाधक था—विशाल लहराता समुद्र। अंगद, जाम्वन्त, हनुमान आदि योद्धा भी इसके हल के लिये चिन्तातुर थे। एकाएक जाम्वन्त की दृष्टि हनुमान पर पडी। उनकी आँखें चमक उठी, बोले—"यह कार्य तो हनुमान के लिये बायें हाथ का खेल है। वे तो पवन-पुत्र हैं, फिर उनके लिये क्या असम्भव ?"

पवन-पुत्र ! पवन-पुत्र !! मैं पवन का पुत्र हूँ। पवन जितनी शक्ति मुझ मे है ? और एकाएक हनुमान उठ खडे हुए। "वे स्वयं वायु के अवतार है" इन शव्दो ने हनुमान के सुप्त तन्तुओं को जगा दिया और वे वायु-वेग से समुद्र पार कर गये।

द्वितीय महायुद्ध के प्रारम्भिक दिनो हिटलर की विजयी सेनाएँ पवन-वेग से जीतती हुई आगे बढ रही थी। जर्मन वायुसेना के विध्वंसक विमान इंग्लैण्ड के चिह्न तक मिटा देने को आतुर से थे। लोगो मे उत्साह ठंडा पड गया था और ऐसा प्रतीत हो रहा था कि कभी भी इंग्लैण्ड नष्ट हो सकता है। ऐसे नाजुक समय मे आत्म-विश्वास के धनी चर्चिल ने इंग्लैण्ड के नेतृत्व का भार संभाला। उस इंग्लैण्ड का, जिसका विश्वास डिग चुका था, जो युद्ध के लिये विल्कुल तैयार नही था, जिसके पास न तो आवश्यक प्रतिरक्षा के साधन थे और न पर्याप्त रसद ही। परन्तु चर्चिल हताश नही हुए। वे तुरन्त कर्म-क्षेत्र मे कूद पडे और पहले ही दिन सिंह गर्जना की—"इंग्लैण्ड लडेगा, प्रत्येक कीमत पर लडेगा। चाहे हमे कितनी भी वडी कीमत क्यों न चुकानी पडे, हम रक्त की अन्तिम बूँद तक लडेंगे। समुद्र तट, युद्ध के मैदान, और खेत-खलिहान, यहाँ तक कि तलवारो की नोको पर भी खडे होकर लडेंगे। हम नहीं हारेंगे। इंग्लैण्ड कभी हार नही सकता।" चर्चिल के इन ओज भरे शब्दो ने मृत अंग्रेज जाति मे मर-मिटने की आग फूंक दी। इंग्लैण्ड-वासियो मे एक नये जीवन का संचार हो गया, और चर्चिल के नेतृत्व मे इंग्लैण्ड शत्रुओं को मुँह तोड़ उत्तर देने के लिये कमर कस कर तैयार हो गया। इतिहास साक्षी है कि आसुरी

शक्ति सम्पन्न हिटलर जैसे योद्धा को भी आत्म-विश्वास के [illegible]
के सामने घुटने टेकने पडे ।



नि संदेह विजय उसी भाग्यशाली का [illegible] करती है जो संघर्ष-शील होते है । सकटो और विपत्तियो से जो घवराते नही एवं विश्वास और आत्म-दृढता से जो गतिशील रहते है । एमर्सन के अनुसार विजय के भागी केवल वही व्यक्ति होते है, जिन्हे अपने ऊपर पूर्ण विश्वास होता है, जो अपनी लगन, दृढता और हिम्मत से बडे से बडा सकट सहर्ष झेलने को उद्यत रहते हैं ।

जीवन के चौराहे पर भाग्य की कु जी दूर से दिखाई देती है, परन्तु भीड इतनी है कि बिना संघर्ष के वहाँ तक पहुँचना असम्भव है । जिस व्यक्ति मे आत्म-विश्वास और दृढता है वह निश्चितरूप से उस कु जी को प्राप्त करने मे सफल हो जाता है, परन्तु जो मनुष्यो की इतनी भीड देखकर ही घबरा जाता है, वह कभी भी सफल नही हो सकता ।

मैं ऐसे कई कारखाने के मिस्त्रियो और दफ्तरो के क्लर्कों को पहिचानता हूँ, जो छात्रावस्था मे बडे होशियार और तेज माने जाते थे, परन्तु वे चमक नही सके क्योकि उनमे आत्म-विश्वास की कमी थी । वे संघर्ष के एक ही चपेटे मे बुझ गये । यदि वे चाहते तो बहुत कुछ कर सकते थे, परन्तु उन्हे स्वयं पर विश्वास नही था । वे अपनी क्षमता से सर्वथा अपरिचित थे । वे स्वयं सूर्य होते हुए भी अपने आप को दीपक समझे बैठे रहे ।

ग्रे अपनी प्रसिद्ध कविता मे उन मोतियो पर दु ख प्रकट करते हैं, जो बिना चमक दिखाये ही तली मे पडे रहे । उन फूलो पर आँसू बहाते है, जो बिना खिले ही मुरझा गये, उन मनुष्यो पर शोक प्रकट करते है, जो संघर्ष के एक झपेटे मे ही बुझ गये ।

सुभाषचन्द्र बोस जिन्होने अन्तिम क्षणो तक दुश्मनो के छक्के छुडाये, जिनका आत्म-विश्वास सदैव बोलता रहा—"वह गोली जो

मेरा काम तमाम कर सकती है अभी किसी ब्रिटिश कारखाने मे तैयार नही हुई।" और बात सही भी निकली कि नेताजी को ब्रिटिश सैनिको के हाथो कभी भी छोटा-सा घाव तक न लगा।

तेनसिंह और हिलेरी के नामो से कौन अपरिचित है जिन्होने अजेय हिमालय के मस्तक पर पाव रखने मे सफलता पाई और अभी कोहली के नेतृत्व मे जिन नौ पर्वतारोहियो ने हिमालय की चोटी को पद-दलित किया, उनमे आज कौन अपरिचित है। क्या ये सब सम्पन्न परिवार के थे? क्या इनके पास अटूट खजाना था? नही! इनमे से अधिकाश साधारण श्रेणी के मानव थे जिनके पास दोनो समय खाने को पर्याप्त भोजन भी नही था। परन्तु उनके पास आत्म-विश्वास का एक ऐसा अटूट खजाना था, जिससे वे अपने लक्ष्य मे सफल हो सके।

याद रखिये! मानव के लक्ष्य के बीच कई उतार चढाव हैं। आलस्य और अकर्मण्यता की परियाँ उसे भुलावे मे डालने के लिए राह रोके खडी रहती है। आप भी, जब मंजिल तक पहुँचने का निश्चय करो और आगे बढो तो यौवन और सौन्दर्य तुम्हे भुलावे मे डालने का प्रयत्न करे, विलास और आमोद-प्रमोद के साधन तुम्हे सुख की मृग-मरीचिका मे भटकाने-बहलाने का प्रयत्न करे, उसका ध्यान रखें। इनकी मीठी-मीठी बातो मे मत आना। संकटो की आंधियाँ तुम्हे विचलित करने को तैयार हो, विपत्तियाँ तुम्हारी राह रोके खडी मिलें, और सम्भव है, अभाव तथा असफलता का दैत्य तुम्हे मल्ल-युद्ध करने के लिये ललकारे भी, परन्तु इनसे डरने की आवश्यकता नही। इन कल्पित आवाजो से आतंकित होने की जरुरत नही। क्योकि ये तभी तक हैं, जब तक कि आत्म-विश्वास की तुम्हारे पास कमी है। अपने बहुमूल्य क्षणो का सदुपयोग कीजिये। अथर्ववेद की ध्वनि आपके कानों से टकरा रही है—'उद्यात ते पुरुष नावयाम्'—तुम उठो! बढो!! उन्नति के पथ पर अग्रसर होने के लिये कटिबद्ध हो, विजय तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही है। ••

# प्रभावशाली-व्यक्तित्व

प्रभावशाली व्यक्तित्व जीवन की एक अमूल्य सम्पत्ति है। चार्ल्स एम० श्वेब के अनुसार मानव एक उपवन है, तो उसका व्यक्तित्व उसमे खिले पुष्प के सदृश है, क्योकि हमारे व्यक्तित्व का प्रभाव हमारे जीवन पर गहराई के साथ पडता है। पजाबी मे एक कहावत है—"आदमी राह पया जानिए या वाह पया जानिए" अर्थात् कोई आदमी कैसा है? इस बात का ज्ञान उसके साथ रास्ता चलने या वास्ता पडने से ही होता है।

हमारे जीवन की छोटी-से-छोटी घटना, अथवा छोटे-से-छोटे कार्य का प्रभाव हमारे व्यक्तित्व पर पडता है। एक प्रकार से हम दैनिक जीवन मे जो कुछ भी करते है, वे सब मिलकर हमारे व्यक्तित्व के ताने-बाने बुनते है।

अमेरिका मे कुछ प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिको ने काफी समय तक परीक्षण करने के पश्चात् यह निष्कर्ष निकाला कि व्यक्ति के चाल-चलन, रहन-सहन, उठने-बैठने के ढग आदि से मानव का स्वभाव, प्रकृति और भविष्य के बारे मे अध्ययन कर निष्कर्ष निकाला जा सकता है।

शापन हावर ने ठीक ही लिखा है कि "मनुष्य के चरित्र का सबसे अच्छा पता उसकी छोटी-छोटी बातो से और उस समय लगता है, जब वह चौकस नही होता।"

संतराम ने मानव-चरित्र को स्पष्ट करते हुए यह बताने का प्रयास किया है कि किस प्रकार से उसकी छोटी-छोटी हरकतो से उसका अध्ययन किया जा सकता है। उन्होने लिखा है कि कडी टांगो वाली चाल एक कठोर और न झुकने वाले व्यक्तित्व की द्योतक होती है। इसी प्रकार भद्दी चाल संकल्प के अभाव का

नक्षण हो सकता है। क्षीण एड़ियाँ—मानो व्यक्ति अपने पैरो को घसीटता है—ऐसे मनुष्य की निशानी है, जो परिवर्तन पसन्द नही करता और जोखिम उठाने मे जिसे सकोच होता है। जो परिवर्तन पसन्द नही करता, और जोखिम उठाने में जिसे संकोच होता है जो व्यक्ति अपनी एडियो को फर्श पर टिका कर बैठता है, और पैर के अँगूठो को मोडता है, वह सम्भवत. खिलाडी प्रकार का है, जो प्रतियोगिता पसन्द करता और चतुरता मे बराबरी कर आनन्दित होता है, देखिए, अपने उत्तरो मे वह कितनी डीगें और छलागें मारता है। उस मनुष्य पर ध्यान दीजिये जो अपनी टाँगो को एक दूसरे के आर-पार करके खडा होता है। आप देखेंगे कि वह प्रतिरक्षात्मक है और उसमे क्षमा माँगने की प्रवृत्ति है।

जिन्दगी जीने के सिर्फ दो ही रास्ते है। एक है अंधकार पक्ष को देखते रहने की प्रवृत्ति और दूसरा है प्रत्येक वस्तु के उज्ज्वल पक्ष को परखने की चेष्टा। अन्धकार पक्ष प्रवृत्ति वाला व्यक्ति हमेशा विपत्तियो को निमन्त्रण देता-सा दिखाई देगा, निराशा उसके चारो ओर मंडरा रही-सी प्रतीत होती है। हर समय ऐसी आशंका कि न मालूम अगले क्षण क्या होने वाला है ? पता नही कौनसा कष्ट आने वाला है—उसके सिर पर सवार रहती है। वह प्रत्येक घटना, वस्तु और यहाँ तक कि व्यक्ति को भी, जो उसके सम्पर्क मे आता है, सन्देह की दृष्टि से देखता है। उसे हर क्षण शिकायत रहती है और दूसरो को उन्नति-पथ पर अग्रसर होते देख उसे ईर्ष्या होती है। वह जो भी काम करता है, उसमे उसे असफलता ही मिलती है। वह यदि सोने को भी हाथ लगा देता है, तो मिट्टी का ढेला बना जाता है।

तनिक ऐसे व्यक्ति के व्यक्तित्व को तो देखिये ! हर समय बुझा-बुझा-सा चेहरा, जैसे उसके जीवन से प्रकाश लुप्त-सा हो गया है। निस्तेज और फीकी आँखें, दाढी बढी हुई, और चेहरा ऐसा कि जिसे देखते ही सारी चेतना लुप्त-सी होने लगे। सूखे और पिचके हुए

गाल, लटके हुए होंठ, काली अमिट झुर्रियों से भरा-सा चेहरा, जो उसकी निराशा का डिंडिमनाद-सा कर रहा है। लड़खड़ाते हुए चरण, जो उसकी लापरवाही को पूर्ण नग्नता के साथ स्पष्ट कर देती है। बैठी हुई छाती, लटके हुए सूखे डंठल से हाथ और झुकी हुई-सी कमर सब मिल जुलकर एक ऐसे व्यक्ति का चेहरा खींचती है-जिसके चारों ओर निराशा ने घर कर लिया है। सुख, वैभव, उन्नति उससे कोसों दूर है। सूना-सा उसका घिसटता हुआ सूना-सा जीवन। क्या ऐसे व्यक्तित्व वाला कभी उन्नति कर सकता है? नहीं, कदापि नहीं।

अब इस चित्र का दूसरा पार्श्व देखा जाय जोकि ठीक इसका उलटा है। ऐसा व्यक्ति प्रत्येक घटना, प्रत्येक वस्तु और प्रत्येक व्यक्ति के अंधकारमय पक्ष को नहीं देखता, अपितु वह सदैव उसके उज्ज्वल पक्ष को देखता है। ऐसा व्यक्ति उमंग का साक्षात् प्रतीक होता है। आनन्द जिसके चारों ओर छिटका हुआ-सा होता है। सुख उसका साथी है, सफलता उसकी सहचरी है, और उन्नति उसकी सेविका है। वह जिधर भी बढ़ जाता है, फूल खिल जाते हैं। उसका हृदय सदैव प्रफुल्ल रहता है। उसकी आँखों में विश्वास की चमक होती है। उसके चेहरे से उत्साह बरसता है। उसके चरणों से दृढ़ता टपकती है। उसका वक्षस्थल पहाड़ों से भिड़ने को आतुर रहता है। उसकी बाँहें सागर लाँघने को बेचैन रहती हैं। उसके दृढ़ चरण सारे ब्रह्माण्ड को नाप लेने की क्षमता रखते हैं। सारा दु:ख-दर्द उससे हजारों कोसों दूर रहता है। सफलता उसकी बाट जोहती है। नवीन विचार, नूतन आनन्द, नये संकल्प उसकी मुट्ठी में होते हैं। वह हँसता हुआ, उछलता हुआ, फुदकता हुआ चलता है।

ये मानव-जीवन के दो पार्श्व हैं। दोनों सत्य हैं, परन्तु पहला जहाँ पराजय का मार्ग है, दूसरा सफलता का। पहला बाधाओं से ग्रस्त है, दूसरा प्रफुल्लता से भरा हुआ। पहला विजय का चिन्ह है, दूसरा अविजय का।

युवक उठ ! पहले मार्ग को छोड। दूसरा मार्ग ही तेरे लिये श्रेयस्कर है। अपने संकल्प को दृढता प्रदान कर। विजयश्री तुम्हारा वरण करेगी, इसमे संदेह नही।

जीवन-क्षेत्र मे सफल होने के लिये यह आवश्यक है कि उसका पहिनावा, शारीरिक सफाई, वातचीत का ढंग आदि सब कुछ ऐसे हों, जो सामने वाले को प्रभावित कर सकें। हमारी आत्माभिव्यक्ति का पहला माध्यम हमारा आकर्षक व्यक्तित्व होता है। मि० टामसन के अनुसार—"शरीर की शुद्धता से मस्तिष्क को एक प्रकार से अनजाने ही सहायता मिलती रहती है।"

न्यूयार्क के एक सफल व्यापारी ने अपने कारखाने मे एक उच्च पद देने के लिये इण्टरव्यू किया। सिर्फ एक जगह के लिये करीब आठ सौ अर्जियां आईं, उनमे से करीब सत्तर लोगो को उसने इण्टरव्यू के लिये चुना।

इण्टर-व्यू के दौरान लोग अभिपंसा पत्र लाये थे। कई व्यक्ति ऐसे कपडे पहिने थे, मानो आज ही लाण्ड्री से बाहिर निकले हो। कुछ व्यक्तियो ने इतने तडक-भडक के कपडे पहिन लिये थे कि वे आकर्षक दिखने की अपेक्षा बहुरुपिये ही अधिक दीखते थे।

उस इण्टरव्यू मे उस सफल व्यापारी ने एक ऐसे प्रत्याशी को चुना, जिसके पास न तो कोई उच्चाधिकारी का सिफारशी पत्र था, और न जो किसी को साथ ला सका था। वडे ही आत्म-विश्वासी ढंग से वह साक्षात्कार देने के लिये आया।

उससे जितने भी प्रश्न पूछे गये, उन सबका उसने बडी धैर्यता से उत्तर दिया। उसके कपडे अधिक कीमती न होते हुए भी सलीके से पहिने हुए थे, चेहरे पर हर समय मुस्कराहट खेलती थी, और ऐसा प्रतीत होता था, मानो इसके हृदय मे आत्म-विश्वास कूट-कूट कर भरा हुआ हो।

व्यापारी से पूछने पर ज्ञात हुआ कि उसने अन्य उम्मीदवारो को पसन्द नहीं किया, उसके कई कारण थे, संक्षेप मे वे ये हैं—

(१) कई व्यक्ति घबराये हुए से आ रहे थे, ऐसा प्रतीत हो रहा था, मानो उन्हे अपने पर विश्वास ही न हो।

(२) कुछ व्यक्ति इतनी चौकन्नी नजरो से कमरे मे घुसे जैसे कि किसी खूनी केस मे जासूसी करने आ गये हो। ऐसे व्यक्ति, जो हर वस्तु, हर क्षण को सन्देह की दृष्टि से देखते हैं, कभी भी सफल नही हो सकते।

(३) कुछ व्यक्तियो का पहिनावा इतना ऊटपटाग और फूहड था कि उससे प्रभावित होने की अपेक्षा अरुचि ही होती थी।

(४) एक दो व्यक्ति ऐसे भी थे, जो अधीर से थे, मानो पीछे आग लगी हुई हो, और वे वहाँ से भागने की तैयारी मे हो।

(५) कुछ लोगो की वेशभूषा अव्यवस्थित थी। नाखूनो मे मैल भरा हुआ, बालो मे सलीके से कंघी नही की हुई, और जूते पर सालो से पालिश नही की हुई थी, जो बाह्याकार मे इतने गन्दे रहते थे, वह अन्दर से कितने गन्दे होगे, इसका अनुमान लगाना कठिन है।

इन सब के बावजूद जिस व्यक्ति को चुना गया, वह साफ-सुथरी वेशभूषा तो पहिने हुए था ही, साथ ही उसने आँखो मे आँखें डालकर बडी धैर्यता और आत्म-विश्वास से प्रश्नो का उत्तर दिया। मैंने पता लगा लिया कि यही व्यक्ति मुझे सहायता दे सकता है, जिसमे आत्म-विश्वास है और मैंने उसे चुन लिया।

कहने का तात्पर्य यह है कि जीवन मे वेशभूषा का सर्वाधिक महत्त्व रहता है। छोटी-से-छोटी बात का भी उसके व्यक्तित्व पर प्रभाव पडता है।

कई लोग ऐसे भी होते हैं, जो कपडे-लत्ते तो साफ-सुथरे, आकर्षक एवं सलीके से पहिनते हैं, परन्तु उनके दाँत पीले होते हैं, मुँह से उनके दुर्गन्ध आती है, नाखूनो मे मैल भरा रहता है, एवं जूतो पर गर्द

जमी हुई होती है। ऐसे व्यक्तियो के वे साफ कपडे पहिनना भी एक प्रकार से व्यर्थ हो जाता है।

कुछ लोगो ने मुझ से प्रश्न किया कि वे अच्छे और आकर्षक कपडे तो पहिनना चाहते है परन्तु उनके पास पैसे नही है। पैसो के अभाव में वे कैसे कपडे खरीद सकते हे ?

परन्तु उन महानुभाव का प्रश्न गलत है। कोई आवश्यक नही, कि काफी कीमत के वस्त्र ही ढंग से पहिने जाते है। सस्ते कपडे भी यदि सलीके से पहिने जायें तो वे व्यक्ति के व्यक्तित्व को सहस्रगुना कर देने की सामर्थ्य रखते है।

मैंने ऐसी कई मारवाडी स्त्रियो को देखा है, जो हर समय रेशमी कपडो और सोने के मोटे-मोटे जेवरो से लदी रहती हैं फिर भी वे न तो आकर्षक दिखाई देती हैं, और न उनका व्यक्तित्व ही खिलता हे।

कहने का तात्पर्य यह है, कि कोई जरूरी नही कि आपके पास कीमती कपडे ही हो, जेवर हो, आपके पास शिष्टाचार का अभाव नही होना चाहिये। चेहरे पर हर समय मुस्कराहट खेलती रहे, इसके लिये द्रव्य की आवश्यकता नही पडती। बडे-बडे प्रत्याशी, जो अपने विद्यार्थी-जीवन में हमेशा अव्वल आये है, जीवन-क्षेत्र में पिछड जाते है। इसका एक मात्र कारण यही है, कि उन्होंने कभी अपने व्यक्तित्व को सँवारने का प्रयत्न नही किया। वस्तुत. आकर्षक व्यक्तित्व ही मानव की आधी सफलता है।

शेक्सपियर अपने एक नाटक मे पात्र के मुँह से कहलवाते हैं, कि पहिनावे से ही व्यक्तित्व आँका जाता है। साफ-सुथरा पहिनावा जहाँ हमे आकर्षित करता है, वहाँ गंदा और अव्यवस्थित पहिनावा हमारे जीवन को भी गिरा देता है। एक अमेरिकी लेखिका ने कहा है, कि यदि हम अन्य सब बातो को छोडकर अपने व्यक्तित्व को ही आकर्षक रख सकें, तो आधी सफलता तो हमें अनायास ही प्राप्त हो जायगी।

अंग्रेजी के प्रसिद्ध लेखक एमर्सन के मतानुसार अच्छी पोशाक पहिनने से जो आत्म-शान्ति मिलती है, वह अन्य किसी भी उपाय से सम्भव नही। यदि कपडे चुस्त, साफ-सुथरे और सलीके से पहिने हुए होते है, तो हम दिन भर प्रसन्न तबियत रहते है, काम करने मे हमारा जी लगता है, और हम चिन्ताओ से मुक्त रहते हुए उन्नति के पथ पर अग्रसर होते हैं।

यदि आपका पहिनावा ढीला-ढाला, अनाकर्षक और अव्यवस्थित होता है, तो वह न सिर्फ आपको ही पराजित करता है, बल्कि आपके चारो ओर के वातावरण को भी वह दूषित कर देता है। आपका 'मूड' तो खराब रहता है ही साथ ही हाथ उन सबका 'मूड' भी'ऑफ' कर देता है, जो आपके सम्पर्क मे आते है। आपका दिमाग सुस्त हो जायगा, विचार-शक्ति कुण्ठित पड जायगी, और शरीर ढीला-सा पड जायगा और न नई विचार धारा ही सूझेगी। एक प्रकार से जीवन के वे अमूल्य क्षण, जो आपके लिये दुर्लभ है, आप यो ही गँवा देंगे।

वस्त्र-विन्यास की एक विशेषज्ञ ने एक बार स्त्रियो को सलाह देते हुए कहा था, कि यदि वे जीवन मे सफलता चाहती है, यदि वे चाहती है, कि पुरुष वर्ग उसके चारो ओर मँडराता फिरे, और यदि वे चाहती है, कि वे उच्चपद को सुशोभित करें, तो इन सबके लिये एक ही वस्तु का ध्यान रखना आवश्यक है और वह है कपडो की ओर से सावधानी।

एक दिन मैं बाजार मे था, मैंने एक लडकी को देखा, जो किसी कार्य से घर जा रही थी। वह वैसी ही साडी पहिने हुए थी, जैसे उसके चप्पल थे, बटुए का रंग भी उसके वस्त्रो से मैच खा रहा था। उसके वस्त्र अत्यन्त कीमती न होते हुए भी इस तरीके से पहिने हुए थे कि उसके वस्त्रो से पवित्रता की महक आ रही थी। चारो तरफ का वातावरण उसकी सादगी से प्रभावित-सा दिखाई दे रहा था। पवित्रता, भावुकता, स्निग्धता, सरलता एवं माधुर्य के चटकदार रंगो से वातावरण सुवासित-सा हो उठा था।

इसके विपरीत एक ऐसी लडकी पर भी नजर पडी, जो नकली रेशम की शोख गहरे चटकदार रंग की साड़ी पहिने हुए थी, परन्तु न तो उसके चप्पल उसके व्यक्तित्व की गवाही दे रहे थे और न उसका पहिनावा ही लोगो को आकर्षित कर रहा था। वह लड़की फूहड, अनाकर्षक व्यक्तित्व हीन-सी लग रही थी।

यदि आप उन्नति के आकाक्षी है तो आइए, आप आज ही अपनी वेष-भूषा पर ध्यान देना शुरू कीजिये। आप उन वस्त्रो का चुनाव कीजिये, जो आपके शरीर पर फबते है। आप ऐसे रंगों के कपडो का प्रयोग करें, जो आपके व्यक्तित्व को निखार सकें। यदि आपको पता न चलता हो, तो आप अपने मित्रो से पूछिये, कि आपको कौनसा रंग खिलता है, और फिर उसी प्रकार के वस्त्र बनवाइये। छोटी से छोटी वात को भी नजरअन्दाज मत कर दीजिये। अपने व्यक्तित्व को आकर्षक वनाने के लिये भरसक प्रयत्न कीजिये, और आप देखेंगे, कि थोडे ही दिनो बाद, जो मित्र आपसे दूर-दूर रहने लगे थे, वे आपके मित्र वनने के इच्छुक हैं। जिन कार्यों मे आपको सफलता नही मिल रही थी, वे कार्य भी सम्पन्न होते जा रहे हैं और विजय-श्री आपका आलिंगन करने को आतुर हो रही है। उठिये! विलम्ब न हो! प्रत्येक क्षण आपके लिये मंगलदायक बने!

•

# देश-प्रेम, विश्व-प्रेम, ईश्वर-प्रेम

जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी ।

मातृभूमिः पितृभूमि । कर्मभूमि सु जन्मनाम् ।
भक्तिर्महृति देशोअयं सेव्यः प्राणैर्धनैरपिः ।।

मदनमोहन मालवीय

सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्तां हमारा ।
हम बुलबुलें हैं उसकी वह गुलिस्ता हमारा ।।

इकबाल

देश-प्रेम मानव की एक सहज स्वाभाविक वृत्ति है, जिस व्यक्ति को देश के प्रति प्रेम नही, वह जीवित रहते हुए भी मृतक तुल्य है.—

जिसको न अपने देश का और जाति का अभिमान है ।
वह नर नहीं है, निरा पशु है, और मृतक समान है ।।

मैथिलीशरण गुप्त

उपर्युक्त पक्तियाँ मानव-जीवन मे स्वदेश का कितना बडा स्थान है, इसकी द्योतक हैं । इसीलिये तो कोटि-कोटि कंठो ने उसे माँ के नाम से पुकारा है । उसकी ही रज मे लोट-लोट कर हम बडे होते हैं— से उत्पन्न अन्न से हमारा भरण-पोषण होता है, और वही की वायु मे हम साँस लेते हैं ।

जिस प्रकार मानव अपने पूर्वजो एव मातृ-पितृऋणो से मुक्त नही हो सकता, उमी प्रकार मानव-जीवन देश के ऋण से भी मुक्त नही

हो सकता। बाबू गुलाबराय के शब्दो मे, "देश प्रेम का अर्थ है, देश की संस्थाओं से प्रेम, देश के रीति-रिवाज और उसमे उत्पन्न वस्तुओं, भाषा, भेष, भूमि आदि से प्रेम और उनके प्रति अपनत्व और गर्व की भावना अनुभव करना।" सच्चे देश-प्रेमी के लिये अपने देश की रजकण का कण-कण पवित्र होता है। उसकी भाषा का माधुर्य, उसके लिये पीयूष के समान होता है, और वहाँ का रहन-सहन, वेश-भूषा, फल-फूल, लता-गुल्म और वृक्ष सभी उसके लिये आकर्षण रखते हैं।

देश-प्रेम महज एक भावना ही नही है, अपितु एक क्रियात्मक भाव है। बिना देश की सेवा के देश-प्रेमी होने का दम भरना छल मात्र है। प्रेमी तभी सम्पन्न हो सकता है, जब उसमे निजी स्वार्थों का हनन होता हो। जब मनुष्य 'स्व' की परिधि से उठ कर 'पर' की परिधि मे पहुँच जाता है, तभी वह वास्तविक देश-प्रेमी कहला सकता है।

देश के प्रति मानव का सर्वप्रथम कर्त्तव्य है कि उसके प्रति उसका हृदय से अनुराग हो। एक उदाहरण पर्याप्त होगा—

"१६२१ के जलते उफनते दिन। चारो तरफ लाठियो, संगीनो, एवं गोलियो का बोलबाला। हर नवयुवक के हाथ लोह-शृंखलाओं से सुशोभित, और हर भारतीय ललना के हाथों मे चूड़ियो की जगह फौलादी बेड़ियाँ। अदालत का कमरा खचाखच भरा हुआ था। एक तरफ खड़ा था हुँकार भरा नवयुवक सुभाष और सामने न्याय का ढोंग बनाये बैठे थे, आग से सुलगते न्यायाधीश। प्रश्न पूछा जाता है, "तुम्हारा नाम?"

"देश-प्रेम।" कड़कती आवाज मे मिलता है उत्तर।

"पिता का नाम?"

"स्वतन्त्रता।"

"क्या काम करते हो ?"

"मेरे देश की आजादी छीनने वाले ब्रिटिश राज्य की जडो को खोद-खोद कर उसकी जडो मे मट्ठा देने का कार्य करता हूँ ।"

न्यायाधीश तिलमिला गया । उसने ऐसा निर्भीक युवक अपने जीवन मे नही देखा था । फैसला सुनाते हुए बोला—"तुम्हे छ महीनो के लिये कठोर कारावास की सजा दी जाती है ।"

"बस !" सुभाष मुस्कराया । "तुम भूल कर रहे हो न्यायाधीश महोदय ! सिर्फ छ मास की सजा । क्या मैंने महज मुर्गी चुराई है, जो मात्र इतनी-सी सजा ?" और उसके अट्टहास से ब्रिटिश-साम्राज्य की अदालत थर्रा उठी ।

द्वितीय विश्व-युद्ध के समय की घटना है । इंग्लैण्ड पर जर्मनी के गोले बरस रहे थे, ऐसा प्रतीत हो रहा था, मानो ये गोले इंग्लैण्ड का नामोनिशान मिटा कर ही दम लेंगे । उन्ही दिनो एक सेनाधिपति को उसके एक मित्र ने सलाह दी कि वह क्यो नही इंग्लैण्ड को छोड कर सुरक्षित स्थान पर चला जाता । इस प्रकार वह स्वय तो क्या, उसका सारा परिवार भून दिया जायगा ।

प्रश्न को सुन वह क्षण भर के लिये मुस्कराया, बोला—"दोस्त ! यह मेरा एक परिवार तो क्या ऐसे लाखो परिवार भी मेरे हो तो मैं उन्हे इंग्लैण्ड छोडने की सलाह न देकर भुनवाने को प्रस्तुत हो जाऊँगा ।"

पिछले दिनो चीन के नग्न आक्रमण के समय एक भारतीय ने प्रधान-मन्त्री श्री जवाहरलाल नेहरू को पत्र लिखा कि मैं यद्यपि अन्धा हूँ, अशक्त हूँ, फिर भी मोर्चे पर जाना चाहता हूँ ।

पत्र प्रकाशित होने पर किसी उच्चाधिकारी ने उससे प्रश्न किया, कि वह नेत्रविहीन मोर्चे पर जाकर क्या करेगा ?

वह बडे आत्म-विश्वास के साथ बोला—"मैं देश-भक्त हूँ, और कुछ नही तो दुश्मन की एक गोली तो मै नाकामयाब करने मे सफल हो सकूँगा ।"

उपर्युक्त उदाहरण देश-प्रेम के वास्तविक स्वरूप को हमारे सामने उपस्थित कर देता हैं।

देशोन्नति के लिये यह आवश्यक है कि देश की चहुँमुखी उन्नति हो। देश-प्रेम में साम्प्रदायिकता का कोई स्थान नही है—

मजहब नही सिखाता, आपस मे वैर करना।
हिन्दी है, हम वतन है, हिंदोस्ता हमारा॥

साम्प्रदायिकता, प्रान्तीयता, जाति-भेद आदि भावनाएँ देश-प्रेम मे बाधक-स्वरूपा है। एक राष्ट्र-भाषा, बन्धुत्व, प्रजातन्त्र आदि देश-प्रेम के सच्चे विधायक हैं। रविबाबू की एक कविता मे, जिसका अनुवाद कविवर सत्यनारायण ने किया है, कितने मनोहर भावों की अभिव्यक्ति हुई है—

भगवन ! मेरा यह देश जगाना
स्वतन्त्रता के उसी स्वर्ग मे, जहाँ क्लेश नही पाना।
रुचे जहाँ मन को निश्चय हो, ऊँचा शीश उठाना।
मिले बिना किसी भेद-भाव के सबको ज्ञान खजाना।

मनुष्य देश-प्रेम की सीढियो से चढकर ही विश्व-प्रेम के सुरम्य द्वार तक पहुँच सकता है। कविवर रवीन्द्र के शब्दो "विश्व में विश्वात्मा ने सिर्फ मानव को ही ऐसा बनाया है कि वह विश्व को प्रेम कर सके। विश्व-प्रेम से प्रेरित कविवर पन्त की निम्न पंक्तियां कितनी सार-ग्राही है—

उदार चरितानातु वसुधैव कुटुम्बकम्।
जहाँ दैन्य जर्जर, अभाव-ज्वर पीडित
जीवनयापन हो न मनुज का गर्हित।
युग-युग के छाया भावो से भासित
मानव प्रति मानव मन हो न सशंकित।
मुक्त जहाँ मन की गति जीवन मे रति
भव मानवता मे जग-जीवन परिणति।

संस्कृत वाणी भाव और संस्कृति
सुन्दर हो जनवास वसन सुन्दर तन ।

जहाँ मनुष्य देश से प्रेम करता है, वहाँ एक चरण उससे भी बढ कर है, और वह है विश्व-प्रेम । आत्मा के विस्तार का अन्त नही है, उसी प्रकार विश्व-प्रेम क्षेत्र भी विस्तृत है । बर्नाड-शा की उक्ति कितनी सटीक है—You will never have a quiet world till you knock patriotism out of the human race

विश्व-प्रेम का पर्याय है मानवता से प्रेम । मनुष्य की दृष्टि जितनी ही सकीर्ण सीमाओ को त्याज्य करती है, उतनी ही वह सुसंस्कृत होती है । उस व्यक्ति की अपेक्षा वह व्यक्ति नि सन्देह अधिक सभ्य और सुसंस्कृत है जो समाज, राज्य या राष्ट्र की अपेक्षा सपूर्ण विश्व के प्रति अनुराग रखता है । मानवता की सेवा उसका प्रथम धर्म होता है । कवि के शब्दो मे—

सर्वे भवन्तु सुखिन सर्वे सन्तु निरामया
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दु ख मात्मवत् ।।

मानव के लिये विश्व से प्रेम करने से पहिले यह आवश्यक है कि वह पर पीडा के मर्म को अनुभव करे । सन्त वही कहा जा सकता है, जो परपीडा मे सम्भागी होता है । गाधीजी का तो यह चरम ध्येय था—

वैष्णव जन तो तेने कहिए, जो पीर पराई जाणे रे ।
पर दुखे उपकार करे तेने मन अभिमान न आणे रे ।

गोल्डोनी के शब्दो मे 'जिस व्यक्ति के चित्त मे अहं' का वास होता है वह कभी सच्चा प्रेमी सिद्ध नही होता । जो व्यक्ति अह का त्याग कर मानवता को अपना लेता है, उसी का जीवन धन्य है—

ये दीनेशु दयाल स्पृशति यानल्योऽपि न श्रीमदो ।
व्यग्रा ये च परोपकार करणे हृष्यन्ति ये याचिता ।।
स्वस्था सन्ति च योवनम्मद महाव्याधि प्रकोऽपि ते ।
तैस्तेर्मैरिव सुस्थिरे किल मार क्लान्ता धरा धार्य ते ।।

मानवता की रक्षा तभी संभव है, जब व्यक्ति शान्ति-प्रेमी बने। आज का मानव विज्ञान की चकाचौंध मे बम बना कर बारूद के शिकार पर जो बैठा है, पता नही कब एक छोटी सी चिनगारी से संपूर्ण मानवता नष्ट हो जाय। युद्ध की यह भीषणता निम्न पंक्तियो मे साकार है—

बरस पडे विध्वंस पिण्ड सौ सौ यानो से ।
सुना सभी ने बधिर हुए जाते कानो से ।।

उसका क्या मैं कहूँ-घोष-दुर्घोष भयंकर ।
प्रेतो का सा अट्टहास शतशत प्रलयंकर ।।

उल्काओ का पतन वज्रपातो का तर्जन ।
नीरव जिनके निकट हुआ ऐसा कटु गर्जन ।।

कुछ ही क्षण उपरान्त एक अर्द्धांश नगर का ।
युग-युग का श्रम साधनाफल वह नर का ।।

ध्वस्त दिखाई दिया चिकित्सालय, विद्यालय ।
पूजालय, गृह भवन, कुटीरो के चय के चय ।।

गिर कर अपनी ध्वस्त चिताओ मे थे जलते ।
कही उजलते, कही सुलगते, धुँआँ उगलते ।।

—सियारामशरण गुप्त "उन्मुक्त"

क्या मानव ऐसे प्रलंयकारी दृश्यो की पुनरावृत्ति चाहेगा ? क्या मानव चाहेगा कि विश्व श्मशान-भूमि मे बदल जाय ? क्या मानव

दानव बनना चाहेगा ? इन प्रश्नो का उत्तर देने के पश्चात् ही विश्व-प्रेम संभव है ।

बाबू गुलाबराय के शब्दो मे—दूसरो को उठाने से हम स्वय भी उठेंगे, और हमारा नैतिक मान बढेगा । आजकल शक्ति की उपासना बेबसी की उपासना समझी जाती है । उसका नैतिक मूल्य नही होता । नीति की उपासना स्वातन्त्र्य की उपासना है । राष्ट्रो मे भय की प्रीति न होकर प्रीति का भय होना चाहिये । सहार और भौतिक बल का सघर्ष तो जानवरो मे होता है । मनुष्य जानवरो से इसलिये ऊँचा है, कि वह बिना सहार के भी विज्ञान के सहारे उन्नति करता है । मनुष्य को अपना वह गौरव अक्षुण्ण रखना चाहिये । यदि अन्तर्राष्ट्रीय संबधो मे उसी न्याय और नीति का व्यवहार होने लगे, जिसका वैयक्तिक नीति मे होता है, तो युद्ध अनिवार्य नही है । यदि न्याय की स्थापना के लिये संहार का आश्रय न लेकर पारस्परिक समझौते से काम लिया जाय, तो मनुष्य जाति का गौरव स्थापित होगा । विज्ञान के चमत्कारो को यदि मानव-हित सम्पादन के कार्य मे लाया जायगा, तो विज्ञान का नाम सार्थक होगा और मनुष्य अपने बुद्धिबल पर वास्तविक गर्व करेगा ।

मनुज का जीवन है अनमोल
साधना है वह एक महान ।
सभी निज संस्कृति के अनुकूल
एक ही रचें राष्ट्र उत्थान ।
इसलिये नही कि करें सशक्त
निर्बलो को अपने मे लीन ।
इसलिये कि हो विश्व हित हेतु
समुन्नति-पथ पर सब स्वाधीन ।

विश्व-प्रेम का उच्चतर सोपान है ईश्वर-प्रेम । मानव अपनी आत्मा

के सहारे ही जीवन मे गतिशील रहता हुआ सब कार्य सम्पन्न करता है और ईश्वर प्रत्येक की आत्मा मे स्थित है । गीता के अनुसार—

ईश्वर सर्वभूताना हृद्देशे अर्जुन तिष्ठति ।
भ्रामयन्सर्वभूतानि यन्त्रा रूढानि मायया ।।

हे अर्जुन! ईश्वर सब के हृदय मे निवास करता है । वह माया मे सब जीवो को वैसे ही नचाता है, जैसे सूत्रधार कठपुतलियो को मंच पर घुमाता है ।

ईसा ने जब यह कहा था, कि स्वर्ग का राज्य तुम्हारे भीतर ही स्थित है, तो इसका सीधा-सादा अर्थ यही था कि विश्व की सभी शक्तियाँ उस ईश्वर के नियन्त्रण मे है और वह ईश्वर हमारे हृदय मे स्थित है । स्वामी शिवानन्द के अनुसार हमारा हृदय बेतार के तार की तरह उस प्रभु से एकता स्थापित करता है । क्योकि प्रभु सर्वव्यापी है ।

सेंट आगस्टाइन के अनुसार "God is like a circle whose centre is everywhere but circumference now here"

स्पष्टत. यह एक सर्वोच्च रहस्य है कि मानवात्मा उस प्रभु से साक्षात्कार करती है जो—

अपाणि पादो जवनो ग्रहीता
पश्यत्यचक्षु संश्रृणोत्य कर्णः ।
सवेत्ति वेद्य न च तस्यास्ति वेत्ता
तमादरग्रयं पुरुषं महान्तम् ।।
—श्वेताश्वेतरोपनिषद्

डॉ० ऐलन ने स्पष्ट कहा था कि बीसवी शताब्दी का कोई भी आविष्कार इस आविष्कार के सामने नही ठहर सकता कि मनुष्य ने अपनी आत्मा की उस शक्ति का अनुभव कर लिया है, जिसकी सहायता से वह अपनी इच्छा के अनुसार संसार मे सब कुछ पा सकता है ।

महात्मा गाधी ने भी उपर्युक्त धारणा की पुष्टि की है। उनके अनुसार ईश्वर न कावा मे है, न काशी मे है। वह तो घर-घर व्याप्त है—हर दिल मे मौजूद है। उसका ध्यान ही विश्व का सर्वोच्च ध्यान है।

यह सुन्दर शरीर, सुन्दर भार्या, यश, सच्चरित्रता अपार धन, आदि सब कुछ रहते हुए भी यदि भगवान् के चरणो मे मन नही लगता, तो विश्व मे जीवित रहना ही व्यर्थ है—

शरीरं सुरूपं तथा वा कलत्र
यशस्चारुचित्रं धनं मेरुतुलाम् ।
मनश्चेन्न लग्न हरे रड्घ्रिमध्ये
तत किं, तत किं तत किं ।।

क्योकि जो अपने आपको ईश्वर के चरणो मे अर्पित कर देता है, वह इस विश्व मे अभय हो जाता है। बावा तुलसी के शब्दो मे—

सीमकि चापि सकै कोउ तासू ।
वड रखवार रमापति जासू ।।

मानस-वालकाण्ड

पंचतत्र ने भी दूसरे शब्दो मे इसी धारणा की पुष्टि की है—

अरक्षितं तिष्ठति दैव रक्षितं
सुरक्षितं दैवहतं विनश्यति ।
जीवत्य नाथोअपि वने विसर्जित
कृत प्रयलोअपि गृहे न जीवति ।

सद्विचार मानव को ईश्वर के निकट ले जाने के शुभ्र सोपान हैं। ईश्वर से सम्वन्ध स्थापित होने पर मानव अकेलापन कभी अनुभव नही करता। पृथ्वी का कण-कण उसी निर्माता की अपूर्व योजना की दुहाई दे रहा है जिस प्रकार चक्की मे जो दाने कील के पास रह जाते हैं, उसी प्रकार ईश्वर से सम्वन्ध रखने वाला मानव विश्व मे सुरक्षित रहता है। कवीर के शब्दो मे—

जाको राखे साइयाँ, मारि न सकि है कोय ।
वाल न बाका करिसकै, जो जग वैरी होय ।।

इसलिये मानव को अभय होने के लिये यह आवश्यक है, कि वह उस प्रभु से सम्पर्क रखे। गुलिस्तां मे शेखशादी ने कितने सुन्दर ढग से कहा है—

जहां ए बिरादर न मानद वकस
दिल अन्दर जहां आफिरी वन्दोबस्त ॥

भाई ! यह संसार किसी के साथ नही जाता। इसलिये इसके साथ दिल मत लगाओ, लगाओ इसके वनाने वाले के साथ। उसके साथ सम्वन्ध जोडने से ही तुम्हारा भला होगा।

ईश्वर का शत्रु कभी मानव का सच्चा मित्र नही वन सकता। यंग के शब्दो मे—

"A foe to God was never a true friend to man."

क्योकि वह पूर्ण है, वह दिखाई न देते हुए भी साथ है—

जहन मे जो घिर गया लाइन्तहा क्यो कर हुआ।
जो समझ मे आगया, फिर वो खुदा क्यो कर हुआ ॥

—अकवर

उसके सामने छोटे वडे का भेद नही। वह दुर्योधन का मेवा त्याग कर विदुर का साग वडे प्रेम से खाता है। कविवर रवीन्द्र के शब्दो मे "God grows weary of great kingdom but never of little flowers" वह सर्वत्र व्यापक है—

व्यापक एक ब्रह्म अविनासी। सत चेतन घन आनन्द रासी।
आदि अन्त कोउ जोसुन पावा। मति अनुमान निगम यश गावा।
विन पद चलै सुनै विनु काना। कर विनु कर्म करै विधि नाना।
आनन रहित सकल रस भोगी। विनुवानी वक्ता वड़योगी।
तनु विनु परस नयन विनु देखा। ग्रह घ्रान विनु वास अशेषा।
अस सव भांति अलौकिक करणी। महिमा तासु जाइ किमि वरणी।

—तुलसीदास

अबू-बिन एक साधारण प्राणी था, पर उसे ईश्वर पर अटूट श्रद्धा थी। एक बार उस अबू-बिन के पास स्वप्न मे स्वर्गलोक का एक दूत आया। वह एक सूची तैयार कर रहा था। अबू ने पूछा, "भाई ! तुम किसकी सूची तैयार कर रहे हो ?"

स्वर्ग के देवदूत ने उत्तर दिया, "मैं उन लोगो की सूची तैयार कर रहा हूँ, जो ईश्वर को अत्यन्त प्यारे है।"

अबू बोला—"भाई ! तो मेरा नाम तो इस सूची मे शायद ही होगा, क्योकि मैने तो कभी भी ईश्वर-स्मरण, पूजा या उसका ध्यान नही किया।"

देवदूत हँसा और मुस्कराते हुए उसने वह सूची उसके सामने रख दी। उसने देखा कि उसमे उसका नाम सबसे पहले स्वर्णाक्षरो मे दमक रहा है।

देवदूत बोला—"अबू ! भगवान् उसे प्यार करते है, जो भगवान् के बनाये इन्सानो को प्यार करता है। इन्सान से प्रेम करना ही भगवान् को प्राप्त करना है।

स्वेट मार्टन के शब्दो मे—"ससार की सम्पूर्ण उन्नति का कारण ईश्वरीय शक्ति ही है, जो प्रत्येक मानव के हृदय मे प्रेरणा बन कर निवास करती है। आज तक मनुष्य अपने जीवन मे जो कुछ भी उन्नति कर पाया है, वह सब उसी ईश्वरीय प्रेरणा के कारण है। वह प्रेरणा सृष्टि की प्रत्येक छोटी-बडी वस्तु को महान् जीवन के लिये तैयार करती है। वास्तव मे मनुष्य और ईश्वर के अपूर्व प्रयत्नो से ही विश्व मे स्वर्णयुग आने वाला है।

सच तो यह है कि ईश्वर के प्रकाश मे कदम रखते ही मनुष्य की सब दुर्बलताएँ, सब पाप सूर्य के सामने के अधकार की तरह नष्ट हो जाते है। बस एक बार संपूर्ण हृदय से ईश्वर मे विश्वास रख उसके पास आओ। वह अपने अनुपम सौन्दर्य से तुम्हे सुन्दर बना देगा। अपनी उज्ज्वलता से तुम्हे उज्ज्वल बना देगा, और तब सचमुच ही तुम सत्य-शिव-सुन्दरम्, ईश्वर की अमर सन्तान बन सकोगे।

# चरित्र-निर्माण

चरित्र मानव-जीवन की सर्वोच्च उपलब्धि है। चरित्र का देवालय ज्ञान-लोक में ही निर्मित होता है। बाह्य प्रभावो के अधीन होना चरित्र का गुण नही है, अपितु चरित्र की जड़ें तो मानव के सुदूर मन मे स्थित रहती है। शेक्सपियर ने चरित्र की अत्यन्त नपे-तुले शब्दो मे व्याख्या की है—

Good name in man and woman dear my
Lord is the immediate jewel of their souls
Who steals my purse, steals trash, it is some thing nothing.
'T was mine, it is his and has been slave to thousands,
But he that filches from me my good name
Robs me of that which not enriches him,
but makes me poor indeed.

मानव अपने चरित्र से ही महान् कहलाता है। मनुष्य का आदर धन, पद या पाडित्य से उतना नही होता, जितना उसके चारु-चरित्र से होता है। लॉर्ड वर्टल के अनुसार चरित्र तो एक ऐसा हीरा है, जो हर किसी पत्थर को घिस कर अमूल्य बना लेता है। रावण लंकाधिपति था, पाडित्य, राजनीति, विद्वत्ता, नीतिज्ञता एवं चातुर्य मे उसके समान कोई नहीं था। उसके बल के सामने इन्द्र थर्राता था, वरुण उसका पानी भरता था और पवन हवा करता था, फिर भी इतिहास मे उसे

उचित आदर नही हुआ। क्यो ? क्योकि वह चरित्र का कमजोर था और इस चरित्रन्यूनता ने उसकी अन्य सभी विशेपताओ को ढक दिया।

सस्कृत साहित्य मे चरित्र की विशेपताओ से पन्ने भरे हुए हैं। एक प्रसिद्ध सस्कृत विद्वान् के अनुसार—

सुगन्धि दर्शनीय च लोकरजन तत्परम्
दृष्ट्वा कुसुममारामे सर्वेरप्यभिनंदितम्।
प्रसाद सुमुख, शील चारित्र्याभ्या सुवासित.
उद्युक्तो लोक सेवाया भवेयमिति भावये ॥

अर्थात् उपवन मे सुगधित, सुन्दर लोको के रजन मे तत्पर और साथ ही सबके द्वारा अभिनदित पुष्प को देखकर मेरे मन मे आता है, कि मुझे भी प्रसन्न मुखशील और चरित्र की सुगध से वासित तथा लोक-सेवा मे तत्पर होना चाहिये।

चरित्र का तात्पर्य आत्म-प्रकाश से है। मानव-जीवन का यह स्वाभाविक गुण है कि वह चाहता है कि अन्य से वह प्रत्येक क्षेत्र मे आगे बढे। पडित चाहता है कि वह पडितो का शिरोमणि बने। कलाकार की यह सदैव आकाक्षा रहती है कि वह अन्य कलाकारो से बाजी मार ले जाय। परन्तु चरित्रवान् व्यक्ति कभी भी प्रतिस्पर्धा मे नही पडता। वह यह कभी नही चाहता कि चरित्र-पालन मे कोई भी व्यक्ति उससे आगे नही बढ सके। वह सर्वोन्नति का अभिलाषी है। सबके चरित्र का विकास देखकर उसके हृदय की कली खिल उठती है। महाकवि गेटे के अनुसार गुण एकान्त मे विकसित हो सकते हैं, परन्तु चरित्र का निर्माण तो संसार के भीषण कोलाहल मे ही संभव है।

प्रसिद्ध मुनि श्री बुद्धमलजी के अनुसार—"जीवन ही सबसे अधिक मूल्यवान् है। चरित्र वस्तुत जीवन से भी महान् है।"

चरित्रशील व्यक्ति का जीवन ही जीवन है, अन्यथा जिन्दगी तो कूकर भी जीते हैं, फिर मनुष्य और कूकर मे अन्तर क्या ? चरित्र ही इन दोनो के जीवन की विभेदक रेखा है । मानव चोला होते हुए भी जो चरित्र से गिर कर जीवन की घडियाँ गिनते है, वे वस्तुत' मृतक तुल्य है । उनका जीवन पशु से किसी भी हालत मे उच्चतर नही । चरित्रवान् व्यक्ति का जीवन ही वस्तुत' जीवन है ।

शिवाजी का विशाल दरवार! जीत की खुशी मे चारों तरफ हर्ष छिटका पड रहा है । सड़कें और गलियाँ इत्र से सुवासित हो उठी हैं । विशाल दरवार मे एक उच्च सिंहासन पर शिवाजी बैठे हुए हैं । चारो तरफ उनके विश्वस्त सेनापति, दरवारी और अनुचर बैठे है । इतने मे चार कहार एक सुन्दर-सी डोली दरवार मे उपस्थित करते है । एक सैनिक आगे वढकर मराठा ढंग से शिवाजी को प्रणाम करता है । सभी दरवारी आश्चर्य से डोले की ओर देख रहे है । शिवाजी खुद आश्चर्यचकित ! वोले—"क्या है हमीरसिंह ?"

प्रणाम करने वाला नवयुवक सैनिक मुस्कराया । झट् से डोले पर पडे पर्दे को उठा लिया । देखा तो एक षोडषी मुगलवाला । रूप मे अद्वितीय, सुकुमार, सलज्ज सभीत चकित हिरणी-सी । सिमटती-सी दुलक कर डोले के पास खड़ी थी, सुन्दरता की साकार प्रतिमा ।

शिवाजी के तेवर चढ गये । वोले—"कौन है यह ?" "महाराज ! हमने शत्रुओ को हरा दिया । सेनापति हार कर भाग गये और पीछे युद्ध-क्षेत्र मे यह सुन्दरी रह गई । मैंने सोचा, यह सौन्दर्य 'आपके महलो की ही शोभा वढा सकता है, इसलिये यहाँ उपस्थित किया ? गलती हो तो क्षमा चाहता हूँ ।" कहता-कहता वह नवयुवक कुटिलता से मुस्कराया ।

उस समय शिवाजी ने जो उत्तर दिया, वह चारित्रिक इतिहास मे युगों-युगों से अमिट है । शिवाजी ने कहा—"नवयुवक ! तुम्हारी गलती

अक्षम्य है। हमारा विरोध मुगलो से है, उनकी स्त्रियो और बालकों से नही। काश! आज मेरी माँ इतनी सुन्दर होती, तो मैं भी कितना सुन्दर होता।"

सभी दरबारी स्तब्ध! शिवाजी के शब्दो ने जैसे जादू फूंक दिया। सारी सभा धन्य! धन्य!! के नारो मे गुंजरित हो उठी। शिवाजी बोले—"हमीर! आदर के साथ इस बाला को इसके पति के पास पहुँचा दो।"

चरित्र का कितना महान् उदाहरण है। ऐसे ही क्षणो पर मानव की परीक्षा होती है। इस अग्नि-परीक्षा मे जो मानव सकुशल खरा उतर जाता है, उसी का जीवन इतिहास मे अमिट रहता है।

महात्मा गाधी तो चरित्र के साकार पुंजीभूत-रूप थे। बचपन मे वे अपने इष्ट मित्रो की सगति से एक बार एक वैश्या के कोठे पर जा पहुँचे। पहुँच तो गये, परन्तु वहाँ उन्हे इतनी आत्मग्लानि हुई कि दोस्तो के लाख रोकने पर भी भाग खडे हुए। सारी रात वे पश्चाताप की अग्नि मे झुलसते रहे। सुबह होते-होते उन्होने अपना कर्त्तव्य स्थिर कर लिया। पिता को पत्र लिखा और उसमे रात्रि की संपूर्ण घटना का उल्लेख कर अन्त मे क्षमा-याचना करते हुए शपथ ली कि भविष्य मे वे ऐसा कभी भी काम नही करेंगे। यही चरित्र दृढता उनके जीवन का आधार बनी और आगे चलकर तो वे चरित्र के पर्याय से बन गये। तभी तो विश्व-विख्यात दार्शनिक बर्ट्रेण्ड रसेल ने एक बार गाधीजी के लिये कहा था कि शब्द-कोश मे चरित्र और गाधी ये दो शब्द रखने व्यर्थ है। किसी एक से दोनो का बोध सभव है।

चरित्र कोई एक पदार्थ नही है, अपितु चरित्र तो उन सब गुणो का समुदाय है जो हमारे व्यावहारिक जीवन से सम्बन्ध रखते है। धैर्य, उदारता, सहनशीलता, विनय, नम्रता, मधुरता, ईमानदारी, सचाई, दृढता, परदुःख कातरता आदि सभी गुण चरित्र के अन्तर्गत

जाते हैं। मानव-मन तो एक विस्तृत उद्यान है, जिसमें हरियाली उगी हुई है, तो काँटे भी उगे हुए हैं, आवश्यकता है ऐसे दुर्गुण काँटों को हटाने की जिससे सद्‌गुणरूपी पुष्प अपने पूर्ण सौरभ से खिल सकें। जो मनुष्य धन-पद से हीन है, चरित्र से उच्च है, वह सदैव उच्च है। एक अंग्रेजी कहावत भी है कि यदि धन चला गया तो कुछ भी नही गया, स्वास्थ्य चला गया तो आधा चला गया परन्तु यदि चरित्र चला गया तो सब कुछ चला गया। वस्तुत चरित्र मानव-जीवन की सर्वोच्च उपलब्धि है, जिसके अभाव मे वह शून्य से अतिरिक्त कुछ नही।

चरित्र मानव-जीवन मे प्राप्त अन्य सब गुणो से सर्वोच्च स्थान पाने का अधिकारी है। चरित्र कभी भय तथा लोभ के अधीन रह कर काम नही करता और न वह जंगल मे खिले पुष्प की तरह होता है, अपितु वह तो एक ऐसा सप्राण पुष्प होता है, जो अपनी सुगन्ध से आसपास के क्षेत्र को भी सुवासित करता है। वह तो एक ऐसा बादल है, जो अपनी अमृत वर्षा से सभी को एक समान तृप्त करता है। चरित्र-वान् व्यक्ति की लोक-परलोक कही पर भी कोई कामना नही होती। चरित्र की मूल-भूत चेतना है देना लेना नही। वह अपने अक्षय-कोष से लुटाता ही है, लोभी की तरह संग्रह नही करता। चरित्रवान् व्यक्ति संसार का भाग्यशाली पुरुष होता है। महाभारत के अनुसार यह ब्रह्माण्ड और इस पृथ्वी की स्थिति इसीलिये अभी तक विद्यमान है, क्योंकि चरित्रवान् व्यक्ति अभी भी जीवित है। दूसरे शब्दो मे चरित्रवान् व्यक्तियों के कारण ही इस ब्रह्माण्ड की सत्ता विद्यमान है।

महाभारत का काल ! धनुर्धर वीरवर अर्जुन जगल मे भ्रमण कर रहे थे। प्रकृति की छटा देखकर वे प्रसन्न हो रहे थे कि एकाएक उन्हे सामने से एक युवती आती दिखाई दी। ऐसा प्रतीत हुआ मानों चतुर्दिक विशेष उजाला-सा छा गया हो। अर्जुन ठिठक गये।

धीरे-धीरे हंसवत मंथरगति से चलती हुई देव-दुर्लभ अप्सरा उर्वशी आई। रति को भी मात करने वाली श्री-शोभा और सौंदर्य के सुकुमार भार से झुकी, पूर्ण यौवन प्राप्त अप्सरा अर्जुन को देख मंद-भाव से मुस्कराई, उसकी आँखो मे शत-शत रूपेण काम थिरक उठा।

अर्जुन ने प्रणाम किया।

प्रणाम का उत्तर देती हुई, वह और पास आई, बोली—"वीर वर! यौवन वीरता को निमन्त्रण देने आया है क्या तुम उसे खाली हाथ लौटाओगे या उसका निमन्त्रण स्वीकार करोगे?"

अर्जुन की आँखें जमीन पर छाई रही। उनके मानस मे भीषण द्वन्द्व उठ रहा था। आखिर कर्त्तव्य और चरित्र ने अन्य दुर्बलताओं पर विजय प्राप्त की, बोले "मात!"

"अर्जुन!"—रमणी बोली—"मैं ऐसे शब्द सुनने के लिये यहाँ नहीं आई हूँ। मैं . "

"पर मात! मैंने कब आपकी आज्ञा का उल्लंघन किया है, आपका निमन्त्रण मुखरित हो।"

नागिन की तरह तड़फकर उर्वशी बोली—"अर्जुन! मैं तुम्हारे जैसा एक पुत्र चाहती हूँ।"

"असम्भव है।" शान्त जलधि की तरह अर्जुन बोले—"मैं ऐसी कल्पना भी नही कर सकता।"

"तो धिक्कार है तुम्हारी वीरता और पौरुष को, जो एक नारी की साधारण इच्छा भी पूरी नही कर सके।"

"परन्तु माता! आप हमारे कुल की माता है। मेरा चरित्र मुझे ऐसी बात की आज्ञा नही देता।"

"तो समझते हो, इसका क्या परिणाम हो सकता है?"

"मैं वह परिणाम भुगतने के लिए तैयार हूँ।"

"तुम कायर, निर्लज्ज और नपुंसक हो।" रमणी फुफकारी। यह पौरुष पर एक करारी चोट थी। साधारण मानव ऐसी चोट से कभी भी परास्त हो जाता, परन्तु चरित्र के धनी अर्जुन ने उत्तर दिया— "माता की आज्ञा शिरोधार्य है।"

"मै तुम्हे श्राप देती हूँ कि तुम एक साल तक नपुंसक रह कर एकान्तवास भोगो।"—उर्वशी श्राप देकर फुफकारती हुई आहत हरिणी-सी चली गई।

परन्तु अर्जुन ने चरित्र की उज्ज्वल चादर पर धब्बा न लगने देने के कारण ऐसे श्राप को भी हँसते-हँसते सहा।

वस्तुत चरित्र एक ऐसी दिव्योषधि है, जो कडवी होने पर भी उसे लोग हँसते-हँसते पीते है। चरित्रशील व्यक्ति सर्वप्रथम अपने 'अह्' को नष्ट करते हैं। मानव का श्रेष्ठतम सत्व उसका मन है, मन के द्वारा ही ज्ञान-शक्ति की रश्मियाँ विकीर्ण होती है, अतः यह आवश्यक है कि उन रश्मियो के पावन बने रहने देने के लिये आत्मा सदैव स्वच्छ तथा निर्मल बनी रहने दी जाय।

कुछ दिनो पूर्व मुझे एक भाई का पत्र मिला था। पत्र मे जहाँ उसने मेरे लेखो के प्रति धन्यवाद देते हुए लिखा था कि उनको पढने से उसे जीवन को जीने की एक बार फिर से ललक बढी है, वहाँ उसने यह जिज्ञासा भी की थी कि किसी भी व्यक्ति के चरित्र को कैसे आँका जाय ? कौन व्यक्ति चरित्र मे कितना उच्च है, या निम्न है, इसकी कसौटी किस प्रकार से स्थिर की जाय ?

जैसा कि ऊपर कहा है, चरित्र कोई एक गुण नही, या वस्तु नही या ऐसा कोई ठोस पदार्थ नही, जो उठा कर दिखा दिया जाय, कि यह वस्तु चरित्र है अपितु चरित्र तो उन सब सद्गुणों का पुञ्ज है,

जिनके प्रयोग से मानव-जीवन दिव्य और निर्मल बनता है। चरित्र ही वह कसौटी है, जिससे उसकी महत्ता आँकी जाती है।

सन् १९४० की घटना है। इंग्लैण्ड का एक जहाज पैंदे मे छेद होने की वजह से डूबने लगा। उस पर करीब डेढ सौ स्त्री और बच्चे तथा करीब इतने ही पुरुष सवार थे। रक्षा के साधन अपर्याप्त थे, और उनके पास इतनी ही सुरक्षा नौकाएँ थी कि जिनसे कठिनाई से डेढ पौने दो सौ आदमी बचाये जा सकें।

धीरे-धीरे जहाज नीचे बैठने लगा। छोटे-बडे सभी डेक पर एकत्र हो गये। कही से किसी भी प्रकार से तुरन्त रक्षा व्यवस्था होनी असम्भव दिखाई दे रही थी। एकाएक उन सबने अपना कर्त्तव्य स्थिर कर लिया। सभी पुरुषो ने अपने प्राणो को जोखम मे डाल कर बालको और स्त्रियो को रक्षा-नौकाओ मे बिठाकर रवाना कर दिया, और उसके बाद वे प्रसन्नचित्त डेक पर खडे हो ईश्वर से अन्तिम प्रार्थना करने लगे।

कुछ समय के पश्चात् जहाज डूब गया, समय पर उनमे से अधिकाश लोगो को बचा भी लिया गया, परन्तु उन्होने अपने चरित्र का जो उदाहरण दिया, वह विश्व मे गौरवमय बन गया और इतिहास के पन्नो मे उनका नाम सदैव के लिये अमर हो गया।

चरित्र को परखने के लिये कोई अवसर निश्चित नही होता। चरित्रवान् व्यक्ति हर समय कसौटी पर चढा होता है। मेरे गाँव मे एक अध्यापक हैं, साधारण श्रेणी के। रुपयो के लेन-देन का मामूली-सा काम भी करते है, और समय-समय लोगो को पैसा भी उधार दे देते है।

एक बार उनके रिश्ते की ही एक औरत उनके पास सोने का हार रखकर करीब हजार रुपया उधार ले गयी। न लिखा-पढी, न रजिस्ट्री

और न कही किसी प्रकार का अन्य प्रमाण । विश्वास के आधार पर ही कार्य चलता था, और यह भी उसी विश्वास की कड़ियो मे से एक कडी थी ।

संयोग की वात । वह हार उनके घर से कोई उडा ले गया। वहुत खोजा, सारे सन्दूक छान मारे, घर का कौना-कौना ढूंढ लिया, पर हार नही मिला, सो नही मिला । वेचारे वडे परेशान कि सामने वाली औरत मन मे क्या सोचेगी ? यदि वह हार छुडाने आई, तो वे क्या जवाव देंगे ? कौन सा मुंह दिखायेंगे ? वह तो यही सोचेगी कि हार इन्होने दवा लिया है । कई रातें इसी प्रकार करवटें वदलते वीत गई ।

अन्त मे एक दिन वे रुपयो का कही से जुगाड वैठा कर उस स्त्री के घर जा पहुँचे, और सारी वात सत्य रूप से उसके सामने रख दी । वोले—"मुझे तो ज्ञात नही, अपितु तुम्हारा हार जितने भी तोलो का हो, वाजार के भाव से हिसाव कर पैसे चुकालो ।"

यद्यपि हार ८ या ९ तोलो का होगा, परन्तु उस औरत ने कहा—"साढे तेरह तोला ।"

"अच्छी वात है", और उन्होने साढे तेरह तोले के पैसे चुका कर प्रसन्न मन से घर लौटे ।

यह है उनके चरित्र की उज्ज्वलता । उनके पास न तो कही लिखा-पढी थी और न कोई जमानती गवाही । यदि वे चाहते तो आसानी से मुकर सकते थे, परन्तु उन्होनें चरित्र पर धव्वा लगने नही दिया ।

एमर्सन के अनुसार 'उत्तम चरित्र ही निर्धन का धन होता है ।' महात्मा गाधी के अनुसार तो चरित्र तभी सुदृढ वनता है, जव मानव

मे कठिनाइयों को जीतने, वासनाओ का दमन करने और दु:खो को सहन करने की शक्ति आ जाती है। लिंकन की इस उक्ति मे कि 'चरित्र तो एक वृक्ष के समान है, ख्याति जिसकी छाया है' कितनी गहन सत्यता है।

वर्मा भारत का मित्र देश है। वहाँ की स्त्रियाँ सौन्दर्य मे जहाँ अद्वितीय हैं, वहाँ उस सौन्दर्य को निखारने मे उनके काले सुचिक्कण आजानुपर्यन्त घने वालो का सर्वाधिक महत्त्व है।

एक वार नेहरूजी वर्मा यात्रा पर गये। वहाँ का बच्चा-बच्चा नेहरूजी का अभिनन्दन कर रहा था। प्रत्येक प्राणी यह चाह रहा था, कि राजकीय अतिथि के सम्मान मे किसी प्रकार की कोई न्यूनता न रहे।

नेहरूजी वहाँ का प्रसिद्ध बौद्ध-मन्दिर देखने गये। उतावली मे सीढियो पर जो कार्पेट विछाया जाने वाला था, वह भूल से रह गया। नेहरूजी अधिकाधिक पास आ रहे थे, नंगी सीढियाँ ठीक नही लग रही थी और अव उतना समय ही नही रहा था कि कार्पेट लाकर विछाया जा सके। एकाएक वात सूझी। वहाँ की सुन्दर स्त्रियाँ सीढियो के दोनो ओर अर्द्ध झुकी अवस्था मे इस प्रकार से बैठ गईं कि वे उनका स्वागत करने हेतु ही उपस्थित हुई हो, और उनके घने सुचिक्कण केश सीढियो पर इस प्रकार से विखर गये कि जैसे काला चमकीला कार्पेट ही विछा हो। सारी सीढियाँ उन वालो से ढक-सी गईं।

नेहरूजी आये, पहली ही सीढी पर कदम रखा था, कि उनकी दृष्टि कार्पेट की तरह विछे उन केश-पुञ्जो की ओर गई। एक दम से छिटक कर दूर जा खड़े हुए, और उनके वालो को हाथ मे लेकर बोले—"आह ! आज मुझे मेरी माँ याद आ गई, उसके भी केश कुछ इसी

प्रकार के . . "और उनकी आँखें कुछ नम हो आई। उपस्थित जन-समुदाय स्तब्ध! आश्चर्य चकित !! और उनके चरित्र की दिव्यता से स्तम्भित !!! पं० नेहरू के कारण एक बार फिर भारत ने चारित्रिक इतिहास मे अपना नाम अमर किया।

जीवन मे ऐसे हजारो क्षण आते है, जब हमे अपना चरित्र परखने का मौका मिलता है और यदि व्यक्ति उस विशेष क्षण को पकडने मे सफल हो जाता है, तो वह अपना नाम इतिहास मे अमर कर जाता है।

योरुप मे एक पहाडी देश है, जिसका नाम स्विट्जरलैण्ड है। वह हमेशा से स्वतन्त्र रहा है। गत महायुद्धो के दिनो मे जर्मनी ने इस पर भी आक्रमण कर दिया। हमेशा से शाति-प्रिय देश ने विवश होकर युद्ध मे भाग लिया।

युद्ध आरम्भ हुआ। नवयुवक जहाँ युद्ध के मोर्चे पर डटे, वहाँ स्त्रियो ने चिकित्सा का कार्य आरम्भ किया। छोटे-छोटे बच्चे भी चुप नही बैठे रहे अपितु उन्होने भी रसद पहुँचाना, सूचनाएँ देना आदि का कार्य भली-भाँति किया।

ऐसे ही एक दिन अस्पताल मे एक बच्चा बीमार पडा था। अवस्था करीब १०–१२ साल की। माँ-बाप का इकलौता लडका। स्विस कर्नल का वह पुत्र हर समय बेचैन रहता, वह भी युद्ध-क्षेत्र मे जाने के लिये आतुर-सा था।

धीरे-धीरे वह बुझने लगा। एक दिन उसने अपनी माँ को बुलाया। बोला—"क्या तुम मुझे मारना चाहती हो?"

"नही बेटा"—माँ फफक पड़ी।

तो एक काम करो, मेरा रक्त किसी सैनिक के शरीर मे डाल दो, जिसे इसकी आवश्यकता हो, नही तो मैं योंही धीरे-धीरे बुझ जाऊँगा,

और यदि मेरा रक्त उस युवक के शरीर में पहुँचे यदि एक भी दुश्मन को गिराने मे सफल हुआ तो मुझे वास्तविक शान्ति मिलेगी ।

वालक के शब्दो मे आग्रह था । चरित्र की उज्ज्वलता स्पष्ट दिखाई दे रही थी । चरित्र के इन्ही गुणो के कारण वह इतिहास मे अमर हो गया ।

स्वनाम धन्य गोखले बचपन मे वडे सत्य-वक्ता थे । अपने प्रारंभिक दिनो मे एक बार पाठशाला मे एक लड़के की नकल कर प्रथम अंको मे पास हो गये । रिजल्ट निकलने पर जब अध्यापक ने उसकी प्रशसा की, तो वे फफक-फफक कर रो पडे । हिचकियो के बीच बोले—"मास्टर साहिव ! मैंने गलती की । मैं प्रथम श्रेणी मे पास होने का *अधिकारी नही । प्रथम श्रेणी मे तो पास होने का वह अधिकारी है,* जिसकी मैंने नकल की है ।" अध्यापक उनके चरित्र और सत्यता पर इतने अधिक प्रसन्न हुए कि उन्होंने प्रधानाध्यापकजी से विशेष पुरस्कार देने की शिफारिश की ।

चरित्रवान् व्यक्तियो से ही देश का निर्माण होता है । संस्कृत मे स्पष्ट है—

यथाहि मलिनैर्वस्त्रैर्यत्र तत्रोप विश्यते ।
एवं चलित वृत्तिस्तु वत्तशेपं न रक्षति ।।

जिस प्रकार गंदे स्थानो पर निरन्तर बैठते रहने से कपडे मैले और दुर्गन्धयुक्त हो जाते है, उसी प्रकार निरन्तर कर्महीनता से व्यक्ति का चरित्र धूमिल हो जाता है । चरित्र-हीन व्यक्ति एक प्रकार से किसी भी देश के लिये कलंकस्वरूप है ।

रस्किन ने कहा था—"जीवन ही एक मात्र धन है ।" परन्तु यदि इसे इस प्रकार से कहा जाय कि 'चरित्र ही व्यक्ति का वास्तविक धन है' तो ज्यादा उपयुक्त रहेगा । चरित्र ही मानव-विकास का

सुदृढ़ चरण है। चरित्र एक घनात्मक सत्ता है, जो अपने प्रभाव से सामने वाले को दिशा-निर्देश कर सकता है, उसका प्रभाव स्थायी और अक्षुण्ण रहता है।

चरित्र मानव-जीवन का आलोक है, जिससे मानव-मन संवेदनात्मक होने के साथ-साथ प्रफुल्लित भी होता है। वह हमारे जीवन को प्रफुल्लित करता है। प्रसिद्ध अंग्रेजी विद्वान् 'बोर्ड मैन' के अनुसार Sow an act, and you reap a habit, sow a habit and you reap a character, sow a character and you reap a destiny. चरित्र तो वह सुरभित उद्यान है, जिससे आस-पास का वातावरण भी सुरभित, सुगंधीमय और सुवासित होकर महकने लगता है। ●●●

# उठो ! जागो !!

समय प्रवाह की तरह अनवरत बहता रहता है, एक क्षण के लिये भी रुकता नही, लाख प्रयत्न करने पर भी मुडता नही। उसे नष्ट कर देने का अर्थ है, जीवन को नष्ट कर देना। जीवन, एक काफी लम्बा समय, क्षण, एक बहुत छोटा समय किन्तु क्षण परम्परा चलती रहती है, जीवन परम्परा रुक जाती है। क्षणो के सातत्य को एक जीवन तो क्या सौ जीवन भी पार नही कर मकते।

युवक ! यदि तुम अपने जीवन का कुछ मूल्य समझते हो, तो तुम्हें क्षण का मूल्य समझना ही होगा। क्षणो को निरर्थक गँवा कर जीवन को सफल नही बनाया जा सकता। वे व्यक्ति कितने भ्रम मे है, जो निष्फल बीतते हुए क्षणो की ओर ध्यान नही देकर प्राय यह शिकायत करते रहते हैं, कि मैं अमुक कार्य अवश्य करना चाहता हूँ, किन्तु समय नही मिल रहा। क्या वे यह कह कर अपने मन को धोखा नही दे रहे है ? यह क्षण, जो कि वर्तमान है, अवश्य ही कार्य प्रारम्भ के लिये एक शुभ मूहूर्त है। तुम्हे अविलम्ब अपने इष्ट कार्य का प्रारम्भ कर देना चाहिये। समय तुम्हारी प्रतीक्षा नही करेगा। यदि तुमने उपयुक्त समय पर कार्य प्रारम्भ नही किया, तो फिर उसके पूरे होने की कोई आशा नही है।

"उठो ! आज का कार्य आज ही समाप्त करदो। इसे कल पर भूल कर भी मत छोडो। 'कल' एक ऐसा राक्षस है, जिसने सैकडो प्रतिभावानो को उदरस्थ कर लिया। इसके तेज पजे असंख्य योजनाओ का गला घोट चुके हैं। जितनी शक्ति आज के कार्य को कल पर टालने मे क्षय होती है, उतनी शक्ति से आज का कार्य आज ही किया जा मकता है।"

मुनि श्रेष्ठ बुद्धमल्लजी का उपर्युक्त कथन आज के नवयुवको के लिये

कितना स्फूर्तिमय, प्रेरणाप्रद और मंगलमय है। उठो ! जागो !! इन चार शब्दो मे कितना विस्तृत अर्थ छिपा पडा है, इसका अनुमान ही नही किया जा सकता।

अभी तो क्या ? अभी तो तरुणाई का सूर्य उदय हुआ है, अभी तो गर्म खून धमनियो मे फुफकारें मार रहा है, अभी तो तुममे इतनी क्षमता है कि तुम नई महत्ता को जन्म दे सको, अपने अस्तित्व की घोषणा विश्व से दृढतापूर्वक करा सको। अपने भावों को नया स्वर देने की तुममे सामर्थ्य है। सारा संसार आज तुम्हारी ओर ताक रहा है। रुको मत ! उठो ! बढो !! सफलता तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही है।

अपने लक्ष्य की ओर सतत् जागरूक रहो। जो व्यक्ति लक्ष्यहीन होता है, वह जीवन मे शायद ही सफलता प्राप्त कर सके। मनुष्य के व्यक्तित्व का निर्माण तभी सम्भव है, जबकि उसका लक्ष्य स्थिर हो चुका है। विश्व मे हजारो प्रतिभाएँ इसलिये कुण्ठित हो गईं कि उनका लक्ष्य एक नही था। वे जीवन मे इधर से उधर भटकते ही फिरे, जीवन का जो अमूल्य अवसर था, वह उन्होने यो ही गँवा दिया।

लक्ष्य प्राप्ति का मूल है संयम। जो व्यक्ति उच्छृंखल हैं, वह कब सयमशील व्यक्ति बन सकेगा ? यदि माँझी संयमशील न हो तो वह कभी भी तूफानो के थपेडे न तो सह सकता है और न अपने गन्तव्य तक पहुँच ही सकता है। लक्ष्य के लिये यह आवश्यक है कि वह लक्ष्य कल्याणकारी, मंगलप्रद एवं नैतिक हो। इन गुणो से भ्रष्ट लक्ष्य मानवोन्नति मे कभी भी सहायक नही हो सकता। साँप को पिटारी मे बन्द कर देने से उसका जहर दूर नही हो सकता। इसके लिये आवश्यक है धैर्य, और साँप को साधने की कला, तभी सपेरा अपने लक्ष्य तक पहुँच सकता है—कार्लाइल के शब्दो में "Have a purpose in life and having it throw into your work.

such strength of mind and muscle as God has given you"

प्रणवो धनु शरो ह्यात्मा ब्रह्म तल्लक्ष्यमुच्यते ।
अप्रमत्तेन वेद्धव्य शरवत्तन्मयो भवेत् ।।

—महर्षि 'अंगिरा'

ऊँकार ही धनुष है, आत्मा ही बाण है, और परब्रह्म परमेश्वर ही उसका लक्ष्य कहा जाता है। वह प्रमादरहित मनुष्य द्वारा ही बीधा जाने योग्य है। अत उसे बीधकर बाण की भाँति उस लक्ष्य मे तन्मय हो जाना चाहिये।

—अथर्ववेद

इस लक्ष्य प्राप्ति मे प्रमुख सहायक है मानव का संयम। पाइथा-गोरस के शब्दो मे—'No man is free who cannot command himself'

सैनेका के अनुसार "Most powerful is he who has himself in his own power"

हेजलिट ने तो स्पष्ट कहा है कि वही व्यक्ति लक्ष्य मे सिद्धि प्राप्त कर सकता है, जिसका संयम सुव्यवस्थित, दृढ एव शक्तिपूर्ण है।

बाइबिल मे एक जगह कहा है कि यदि विश्व मे से 'प्रेम' निकाल दिया जाय, तो पीछे मात्र शून्य ही बचेगा। प्रेम मानव की आत्मा का उज्ज्वल प्रकाश है। प्रेम-प्रेरित कार्य ही मानव-जीवन को समृद्ध बनाने मे सहायक हो सकता है।

पोथी पढि पढि जग मुआ, पण्डित हुआ न कोय ।
ढाई अक्षर प्रेम का, पढे सो पण्डित होय ।।

—कबीर

प्रेम शब्द जितना पवित्र है, उतना ही उच्च है, सीगर के शब्दो

मे—'वह चन्द्रमा के समान उज्ज्वल है—Love is like the moon'

प्रेम मे अहम् के लिये कोई स्थान नही। प्रेम सौदा नही करता, अपितु वह तो हृदय से हृदय का सुखद सेतु है। भवभूति के शब्दों में—

व्यतिपजति पदार्थानान्तर कोपि हेतु।
खिलु वहिरुपाधीन् प्रीतय सश्रयन्ते॥

प्रेमी ही जीवन मे सच्चा कर्मयोगी बन सकता है। प्रेमी फल की इच्छा नही रखता, वह कार्य करने मे विश्वास रखता है। ऐसे ही निष्काम प्रेमी का उदाहरण श्रीकृष्ण ने गीता मे वीर अर्जुन को समझाया था—

कर्मण्येवाधिकारास्ते मा फलेपु कदाचन्।
या कर्मफल हेतुर्भूर्मते संगोस्त्वकर्मणि॥

—गीता

प्रेम की परिधि संकीर्ण नही, उसका प्रसार सम्पूर्ण विश्व मे है। सारी मानव-जाति उसकी कुटुम्ब है। वह "आत्मान सर्व भूताना" मे विश्वास प्रकट करता है। प्रेम ही वाइविल के शब्दो मे ईश्वर है, जो प्रेम कर सकता है, वही ईश्वर को पहिचान सकता है। Beloved let us love one another, for love is God, and every one that loveth is born of God and knoweth God He that loveth not knoweth not God, for God is love.

—बाइबिल

प्रेम ही जीवन का सार है। एक सूफी कवि के शब्दो मे मानव-प्रेम ही ईश्वर-प्रेम का परिवर्तित दृष्टिकोण है—

मा वादा हेच दिल वे इश्क बाजी
अगर वाशद हकीकी या मजाजी,
मजाज आइना दार-ए-रूए मा नस्त
सर-ए-इन जन्व हम दारूए-मनस्त।

आत्म-परीक्षा मानवोन्नति का एक श्रेष्ठ सोपान है। महात्मा गांधी के शब्दो मे, "मनुष्य जीवन का उद्देश्य ही आत्म-परीक्षा है।" अपनी आत्म-परीक्षा के लिये सत्यकाम विद्यालंकार के सुझाये ये पाँच प्रश्न अत्यन्त ही सहायक होगे—

१. आप घर या बाहर किसी की भी सेवा प्राप्त करके कृतज्ञता-प्रकाश के लिये धन्यवाद करते है या नही।

२ आप अपनी भावनाओ को प्रकट करते समय अन्य कुटुम्बियो की भावनाओ का भी ध्यान रखते हैं, या नही ?

३ आपकी वेश-भूषा, बातचीत या आपके नित्य व्यवहार मे दुर्विनय की झलक तो नही है ?

४. अपने पडौसियो के मुकाबले मे अमीर दिखने के लिये आप विशेष चेष्टा तो नही करते ?

५. दूसरो को पीछे धकेलकर आगे बढना, दूसरो की बात काट कर बोलना, भेंट का निश्चित समय निर्धारित करके अन्य आवश्यक काम मे व्यग्र होने का बहाना बनाते हुए निश्चित समय पर अनुपस्थित रहना, अथवा जानबूझकर दूसरो को घण्टो इन्तजार करवाना, ये सब चेष्टाएँ अविनय के लक्षण है। आत्म-निरीक्षण द्वारा हमे यह परीक्षा करते रहना चाहिये, कि कही अनजाने मे भी हम ऐसी चेष्टाएँ तो नही कर रहे।

आत्म-निरीक्षण से ही आत्म-विश्वास उत्पन्न होता है, आत्म-विश्वास ही सफलता का प्रिय मित्र है।

चरित्र-निर्माण जीवनोन्नति का एक ध्रुव विन्दु है। चरित्र-निर्माण कोई एक कला नही है, जिसकी साधना की जा सके, अपितु वह तो सम्पूर्ण जीवन का एक मूल है जीवन-निर्माण ही दूसरे शब्दो मे चरित्र-निर्माण है, और चरित्र-निर्माण ही सफलता का मुख्य द्वार है। स्माइल्स के शब्दो मे—Character must be capable of standing firm upon its feet in the world or daily work,

temptation and trial and able to bear the wear and tear of actual life.

मनुष्य जब भी कुछ सोचता है, तो उसकी ध्वनि-तरंगें मस्तिष्क को झंकृत करने के साथ-साथ सम्पूर्ण वायुमण्डल को भी प्रकम्पित कर देती है। ये प्रकम्पन अन्य प्रकम्पनो की सृष्टि करते हैं, और इस प्रकार ये विचार-ध्वनि-तरंगें इतनी सुदृढ हो जाती है कि बडी-बडी बाधाओ के सिर भी झुकाने मे समर्थ हो जाती है।

किसी ने ठीक ही कहा है, कि मानव जैसा सोचता है वैसा ही बन जाता है। यदि उसके विचार उत्साहपूर्ण, मगलमय और श्रेष्ठ होते है, तो उसका जीवन भी सज जाता है। इसके विपरीत जिसके विचार निराशा के सागर मे ग्रस्त होते है, वह कभी भी अपने जीवन मे ऊँचा नही उठ सकता। सत्यकाम विद्यालंकार के शब्दो मे "जीवन का मार्ग बाधाओ की चट्टानो से पटा पडा है। इन बाधाओ को ही सीढी बनाकर चढने वाला व्यक्ति सफलता के शिखर पर पहुँच पाता है। उनसे घबराकर बैठने वाला व्यक्ति कभी आगे नही बढ सकेगा। सफलता का दीपक आपके अन्त.करण की ज्योति से ही जलेगा, आपको अपने हाथो उसे जलाना होगा। अनुकूल अवसर का संकेत भी आपका अन्त करण ही आपको देगा। उस अवसर की प्रतीक्षा मत कीजिए। वह स्वयं नही आयेगा। अवसर की प्रतीक्षा करना निराधार सपने लेने के समान मिथ्या है। यदि आप दैव, भाग्य या अवसर पर ही भरोसा रखते है तो आपका जीवन असफलताओ और मानसिक दुर्बलताओ से भर जायगा। प्रत्येक दैवी घटना के पीछे मनुष्य का हाथ होता है। सफलता संयोग से नही, पुरुपार्थ से मिलती है। बीते समय पर आँसू बहाना कायरो का काम है। परिस्थितियो को कोसना अपने को धोखा देना है। इस रोने-धोने मे शक्ति का अपव्यय मत कीजिए। हर नया दिन नई आशाओ के साथ उदय होता है। हर सफलता नई सफलता के मार्ग को आसान बनाती है। कोई भी असफलता इतनी बडी नही कि वह आपकी सफलता पाने की

योग्यता को छोटा कर दे। आपका जीवन वह दीपक के झोको से बुझ जाए। यह तो वह ज्वाला है, जो आँधियों से लिपट कर आसमान को ललकारती है।

विश्वास और संकल्प सफलता की दो कुंजियाँ है। ये कुंजियाँ तुम्हारे पास हैं। यह एक ऐसा जादू है, जो मन की तरंगो को शक्ति से भर देता है, मुर्दे मे भी जीवन का संचार कर देता है। अपने मन मे यह दृढ निश्चय कि जैसे भी हो, मैं सफलता प्राप्त करके ही रहूँगा, तुम्हे वह शक्ति प्रदान करेगा, कि जीवन की दौड मे सबसे आगे निकल जाओगे।

संसार के सभी विचारक इस बात से सहमत हैं कि मानव अपार एव अपूर्व शक्तियो का पुञ्ज है। गीता के अनुसार—

"मन. एव मनुष्याणा कारण बन्ध मोक्षयो ।"

जिसके मन मे जो भी भावना होती है, वह फलवती अवश्य होती है। ईसा के शब्दो मे—As a man is thinking in his heart so is he

नैपोलियन की विजयी सेना के सामने आल्प्स खडा था। सेनाधिकारियो ने कहा—"आगे आल्प्स है।"

नैपोलियन ने दृढता से उत्तर दिया—"आगे बढो ! आल्प्स अपने आप हट जायगा।"

यह था नैपोलियन का विश्वास, विचारो की दृढता, जिसके सामने आल्प्स को भी झुकना पडा।

बिहार के भूकम्प के दिनो की घटना है। मैंने वहाँ एक आश्चर्य-जनक सत्य देखा। एक वृद्धा लकवे से पीडित थी, चलना-फिरना तो दूर, उससे हिला-डुला भी नही जाता था। सब उसे छोड कर भाग खडे हुए। परन्तु एकाएक वह मौत के भय से घबराकर उसके हृदय मे न मालूम कैसे प्रेरणा जगी कि वह उठ कर भागने लगी। वहाँ

जितने भी लोग खडे थे, इस दृश्य को देख कर दंग रहे गये ।

श्री रामनाथ सुमन के शब्दो मे—'अधकार के बादलो को चीर कर उनके ऊपर फैलती चाँदनी या उषा की मुस्कान के समान जीवन मे संकल्प एवं विश्वास का उदय होता है । जब यह आता है, मनुष्य का चेहरा दमक उठता है । पाँवो मे गति, छाती मे आँधी का साहस, आँखो मे एक अद्‌भुत नशा, हृदय मे महान् आकांक्षाएँ रहती है और मन सावन के बादलो-सा भरा-भरा लगता है । सब कुछ सहज लगता है, सब कुछ साध्य दीखता है, सब कुछ हथेली पर धरा जान पडता है । चारो ओर प्राण की लहर उमडती है, जीवन नाचता है, सफलताएँ अभिनन्दन करती है, अँधेरी जीवन-निशा मधुर एवं प्राणदायिनी हो जाती है ।'

सफलता सदैव श्रम की अपेक्षी होती है । परिश्रम ही व्यक्ति के भाग्य का निर्माण करती है—

उद्यमेन हि सिध्यन्ति कार्याणि न मनोरथै
नहि सुप्तस्य सिंहस्य प्रविशन्ति मुखे मृगा ।।

—हितोपदेश

श्रम ही श्री का पर्याय है । श्रम का विस्तार न केवल हाथों तक ही सीमित है, अपितु वह मन, मस्तिष्क, जीवन के हर क्षेत्र, हर कार्य तक फैला हुआ है । परिश्रम से ही अमोघ कार्य सिद्ध हो जाते है । आज जो विज्ञान का इतना विस्तार हुआ है, साहित्य की इतनी वृद्धि हुई है, कला की इतनी उन्नति हुई है, क्या इन सबके पीछे श्रम नही झलक रहा है ?

एक साधारण-सा मजदूर यदि रोज एक घण्टा भाग्य कोसने की अपेक्षा परिश्रम करे, तो हजारो रुपये कमा सकता है । एक विद्यार्थी यदि रोज एक घण्टा अधिक अध्ययन मे चित्त लगावे, तो कक्षा मे सर्वप्रथम आ सकता है । एक निरक्षर यदि रोज एक घण्टा पढ़े, तो

वह स्नातक हो सकता है। वस्तुत. प्रत्येक कार्य-सिद्धि के पीछे श्री की महत्ता अनिवार्य है।

निरन्तर श्रम और अध्यवसाय असम्भव को भी सम्भव कर देता है। एक साधारण-सा व्यक्ति, जो अपने ही हाथो उसी डाल को काट रहा था, जिस पर वह बैठा था, निरन्तर श्रम, लगन, एवं अध्यवसाय से कुछ ही वर्षों मे संस्कृत का प्रकाण्ड पण्डित बन गया। मेघदूत, रघुवंश आदि के रचयिता महाकवि कालिदास के नाम से आज कौन अपरिचित है !

डा० बान ने एक बार कहा था—मुझ मे कोई रहस्य नही है। मुझ मे प्रतिभा भी उतनी ही है जितनी एक साधारण व्यक्ति मे, पर हाँ, एक बात मे मेरी विशेषता मानी जा सकती है और वह है श्रम। होमर के अनुसार 'Labour conquers all things' परिश्रम करते रहने से अतिशय आनन्द की प्राप्ति होती है। परिश्रम ही मानव को उसकी बुराइयो से बचाता है।

आप आज ही प्रतिज्ञा करें, कि आप निरन्तर परिश्रम करेंगे, परिश्रम परिश्रम 'और परिश्रम परिश्रम की बदौलत आप जो भी चाहेगे वह लेकर रहेगे। 'करूँगा या मरूँगा' यह आपका ध्रुव वाक्य होना चाहिये। आप मुस्कराते हुए देखेंगे, कि दु खो की रात्रि व्यतीत हो रही है व सफलता का सूर्य सामने क्षितिज पर मुस्कराता हुआ उग रहा है।

जो आदमी लोकप्रिय होना चाहता है, उसके लिये यह आवश्यक है कि वह व्यवहार-कुशल बनें। व्यवहार-कुशलता मानव को सफलता के द्वार की ओर शीघ्रता से ढकेल देती है।

योग्यता, परिश्रम, लगन, तत्परता, कर्त्तव्यशीलता एवं ईमानदारी आदि तब तक निष्क्रिय है, जब तक कि व्यक्ति व्यवहार-कुशल न हो। व्यवहार-कुशल व्यक्ति एक प्रकार से सामाजिक राजनीतिज्ञ है, जो

दिल खीचने की कला जानता है, वह अपने गुणो की छाप दूसरो पर डालने मे सफल होता है, और परिस्थितियो को अपने अनुकूल बनाने मे समर्थ हो जाता है।

महाभारत के अनुसार व्यावहारिक व्यक्ति ही जीवन संघर्ष मे टिक सकने की क्षमता रखने मे सफल होता है—

> यस्मिन्यथा वर्तते यो मनुष्य·
> तस्मिंस्तथा वर्तितव्यं सधर्म ।
> मायाचारो मायया वाधि तव्य
> साध्वाचार साधुन्त प्रत्युपेय: ॥
>
> —वेद व्यास

व्यवहार कुशलता मानव की सफलता के मार्ग का 'शॉर्ट कट' है। आज का जीवन संघर्षमय है—उसमे होड-सी लगी पडी है। उस सफलता की दौड़ मे वही व्यक्ति सफल हो सकता है, जिसने व्यवहार-कुशलता के मर्म को भली-भाँति समझ लिया है।

सफलता चाहने वाले व्यक्ति को चाहिये, कि वह अवसर की पहिचान करना सीखे। डिजरायली के शब्दों मे "मनुष्य के लिये जीवन मे सफलता का रहस्य हर आने वाले अवसर के लिये तैयार रहता है।" The secret of success in life, is for a man to be ready for his opportunity when it comes )

अवसर ही मानव को सफलता के निकट पहुँचा देता है। शेक्सपियर ने ठीक ही कहा है कि—"There is a tide in the affairs of men. which taken at the flood, leads on to fortune."

वावा तुलसी के शब्दो मे—

> अवसर कौडी जो चुकै, वहुरि दिये का लाख ।
> दूइज न चंदा देखिए, उदौ कहा भरि पाख
>
> —दोहावली

वृन्द ने भी कहा है—

> फीकी पै नीकी लगे, कहिए समय विचारि ।
> सब को मन हर्षित करे, ज्यो विवाह मे गारि ।।

जिस व्यक्ति के हृदय मे उन्नति की आकाक्षा है, वह किसी भी अवसर को तुच्छ नही समझता, चाहे कैसा भी कार्य क्यो न हो, वह उसमे पूरी लगन से जुट जाता है । एडिसन, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, नैपोलियन वोनापार्ट, क्लाइव, वरवैंक, स्टीफेंसन आदि ऐसे हजारो व्यक्तियो के उदाहरण दिये जा सकते है, जिन्होने अपने जीवन मे अवसर को पहिचानने की क्षमता उत्पन्न की और सफल हुए ।

अकसर जिसे हम तुच्छ और नगण्य समझ कर फेंक देते हैं, उसी मे महानता के चिन्ह छिपे रहते हैं । जिस वक्त को हम व्यर्थ समझते हैं, उसी के उचित उपयोग से हम समृद्धिशाली हो सकते है । हिम्मत कीजिये, अवसर को पहिचानने की क्षमता उत्पन्न कीजिये, देखिये उन्नति का पर्दा आपके सामने उघडता चला जा रहा है ।

स्वास्थ्य की ओर ध्यान देना भी उन्नति के मार्ग को ही प्रशस्त करना है । जीवन सफलता के लिये स्वास्थ्य सर्वोपरि साधन है । राजस्थानी मे एक कहावत है—"पहला सुख निरोगी काया ।" जीवन का सर्वोच्च सुख निरोगी शरीर है ।

महर्षि चरक ने स्वास्थ्य-रूपी घर को स्थिर रखने के लिये उसके तीन पाये—आहार, निन्द्रा और ब्रह्मचर्य—वताया है । त्रय उपस्तम्भा आहार स्वप्नो ब्रह्मचर्यमिति ।

ईश्वर ने हमे एक वडा भारी अस्त्र दिया है, जिससे हम जीवन मे असम्भव से असम्भव कार्य को भी सम्भव कर सकते हैं, और वह है 'स्वास्थ्य' । शरीर के स्वास्थ्य के साथ-साथ मन भी स्वस्थ रहना आवश्यक है । [illegible] की ओर ज्योही ध्यान देने

लगोगे, तुम अपने आपको तेजी से बदलता हुआ अनुभव करोगे, तुम्हारे ऊपर जीने का एक नशा-सा चढ जायगा, और जीवन की सारी सिद्धियाँ तुम्हारे चरणो मे लौटने को आतुर-सी दिखाई देंगी।

मित्रो ! उठो ! तुम साहस के पुतले हो। निराशा का राक्षस भयभीत-सा थर-थर काँप रहा है। अंधकार को चीर कर प्रकाश की किरण बिखेरने का जिम्मा तुम्हारे ऊपर आ पडा है। तुम उठो ! कसमसा कर उठ खडे होओ, देखो ! मेघ तुम्हारा अभिषेक कर रहे हैं, वायु तुम्हारे माथे की लट सहला रही है। समुद्र तुम्हारे चरण पखारने को आतुर-सा उमड रहा है, विजय मंगल-थाल सजाकर कभी की अगवानी हेतु तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही है। सावधान होकर आगे बढो ! उठो ! जागो !!

•

## सफलता के सोपान

'सफलता की रेखाएँ उन मनुष्यो के कपाल मे अंकित हैं जिनके हृदय मे नवीन आविष्कारो की आँधी हरहराया करती है। जो कर्मक्षेत्र मे कमर कस कर खडे होने की ताकत रखते हैं, जिनकी मानसिक शक्तियाँ तेजस्वी, अटल और प्रतापी होती हैं,—हिन्दी मे एक प्रसिद्ध विद्वान् की उक्ति कितनी सटीक है। जीवन मे प्रत्येक व्यक्ति चाहता है कि वह सफल हो। उन्नति के द्वार उसके लिए सदैव खुले रहे। परन्तु वह क्या कभी क्षण भर भी ठहर कर सोचता है कि उसके लिए वह क्या प्रयत्न करता है। ऐसी कौनसी बाधा है, जो उसके मार्ग का रोडा बन कर जीवन को विशृंखलित बनाये दे रही है?

प्रत्येक व्यक्ति पूर्णता का आकाक्षी है। वह चाहता है कि उसे सिद्धि प्राप्त हो। सी० डब्ल्यू० वेण्डेल ने सफलता का रहस्य बताते हुए कहा है कि जिस व्यक्ति से आप वार्तालाप कर रहे हैं, उसमे पूर्ण ध्यान देने में ही मफलता का गुर निहित है।

जीवन मे प्रत्येक व्यक्ति अपूर्ण उत्पन्न होता है पूर्णता की ओर बढना उसका ध्येय होता है। जो इस मजिल का मर्म ममझ लेता है, वही ध्येय तक पहुँच पाता है, दूसरे लोग तो बीच मे ही रह जाते हैं।

कुरान शरीफ मे हजरत मुहम्मद माहब ने एक जगह कहा है, कि यह ससार एक सुन्दर पडाव है और भोग-विलास, आमोद-प्रमोद, वैभव, धन, ऐश्वर्य मुख, आदि ऐसे वितान तने हुए है, जहाँ तरह-तरह के नाच-गाने आदि हो रहे हैं। इन सब के पार ही खुदा का वह स्थान है,

जो सादा होते हुए भी पवित्र है, हल्का-सा होते हुए भी मनोहर है, वहाँ इन सबसे श्रेष्ठ वस्तु विद्यमान है, वह है शान्ति और सन्तोष। वहाँ एक ऐसा शुभ्र प्रकाश छाया हुआ है, जो मानव को सच्चा ज्ञान प्रदान करता है।

विरला ही अपनी मंजिल पार कर उस स्थान तक पहुँच पाता है, अन्यथा, दूसरे तो बीच के ही रंगीन प्रलापो मे उलझ जाते है, और साँसो के चन्द लमहे समाप्त हो जाने पर विवश हो जाते हैं।

ठीक यही बात सफलता के लिये भी लागू है। सफलता ही वह केन्द्र-बिन्दु है, जहाँ प्रत्येक पहुँचना चाहता है, परन्तु बीच मे आलस्य, अकर्मण्यता के ऐसे इन्द्र-धनुषी अखाडे विद्यमान है, जो मानव को बीच मे ही भुलावे मे डाल देते हैं। जो अपनी धुन का पक्का होता है, वही अंतिम मजिल तक पहुंच पाता है।

जो व्यक्ति लक्ष्यहीन होता है, उसका कही सम्मान नही होता, इसके विपरीत जिसका लक्ष्य सुनिश्चित होता है वह अंतत. सफलता प्राप्त करके ही रहता है। लक्ष्य जीवन का महत्त्वपूर्ण बिन्दु होते हुए भी वह सदा स्पष्ट रूप से नही रहता। कई व्यक्ति तो जीवन भर प्रयत्न करने के पश्चात् भी लक्ष्य को नही पहचान पाते। इस प्रकार लक्ष्य की अस्पष्टता के फलस्वरूप उसे चारो ओर धुँध-सा दिखाई देता है और वह अपना मार्ग नही चुन सकता।

लक्ष्यहीन व्यक्ति कभी भी संयत नही रहता। सुबह से लगाकर शाम तक व्यक्ति यदि बिना लक्ष्य के अस्त-व्यस्त-सा होता है, तो समझना चाहिये, कि वह व्यक्ति जीवन मे कभी भी सफल नही हो सकता। लक्ष्य को समझ लेना ही हमारे सन्तोष का विषय होता है, साथ ही वह हमारा ऐसा ध्रुव बिन्दु होता है, जिसे हम निरन्तर गतिशील रख सकते हैं।

लक्ष्य बनाने के लिये यह आवश्यक है कि हम अपने आदर्शों के प्रति जागरूक रहे, साथ ही साथ हमारी प्रवृत्तियाँ भी ध्वंसोन्मुख न होकर विकासोन्मुख बनी रहे। यह ध्यान रखने की बात है कि प्रवृत्तियो को विकासोन्मुख करने की चेष्टा मे कही उन्हे नष्ट न करदें। संयम इन सब के लिये श्रेष्ठ उपाय है। गीतादि पुस्तक इस कथन की साक्षी भूत हैं—

विषयान्प्रति भो पुत्र सर्वानेव ही सर्वथा।
अनास्थापरमा ह्येषा सा युक्तिर्मनसो जये॥

—योग

सदैव वासनात्याग शमोऽयमिति शब्दित ।
सदृशं चेष्टते स्वस्या प्रकृते ज्ञानवानपि।
प्रकृतिं यान्ति भूतानि निग्रह किं करिस्यति ?

—गीता

सच्चा संयम सदैव संयत व्यवहार मे सुरक्षित रहता है। जिसने मानव के प्रति व्यवहार करना सीख लिया, वह सदैव जीवन-पथ पर अबाध गति से अग्रसर होता रहता है।

जीवन मे उन्नति करने के लिये यह भी आवश्यक है कि वह अपने आप का भला समझे। जो व्यक्ति अपने को दीन-हीन, अशक्त एवं व्यर्थ-सा समझता है, वह कभी भी उन्नति नही कर सकता। मनोवैज्ञानिको का कथन है, कि सिर्फ मानव का दिमाग ही नही सोचता अपितु उसका सारा शरीर सोचता है। मानव ईश्वर निर्मित है, वह उसकी सर्वोत्तम रचना है। इसलिये जो मानव की अर्थात् अपनी निंदा करता है, वह एक प्रकार से ईश्वर की निन्दा करता है। उपनिषदो मे स्पष्ट लिखा है—"अपनी निन्दा न करें।" इसलिये मानव को चाहिये कि वह अपने को सदैव सफल रूप मे देखे।

एलबर्ट हर्बर्ट का यह कथन कि आप अपना जो मूल्य आँकते हैं, सफलता उसी का साकार रूप है (Success is the realization of the estimate you place upon yourself) अक्षरशः ठीक है। उपनिषदो का कथन है—"मनुष्य जो मन मे ध्यान करता है, वह वाणी मे कहता है, जो वाणी से कहता है, वही कर्म करता है। जैसे कर्म करता है, वैसा ही फल पाता है।"

स्वेट मार्टेन अंग्रेजी के प्रसिद्ध लेखक हैं। उन्होने कहा है कि "यदि हम अपने जीवन का सबसे उत्तम फल पाना चाहते हैं, तो हमे अपना भला सोचना चाहिये। यही नही, हमे अपने शरीर के प्रति भी न्याय करना चाहिये। तभी हम सबसे ऊँचे दर्जे के और सबसे प्रवीण मनुष्य बन सकेंगे। शरीर का निर्माण, उसकी शक्ति, और सुन्दरता का विकास करना उतना ही आवश्यक है, जितना कि मानसिक विकास करना। ऐसे बहुत से लोग हैं, जो दूसरे के लिये भले हैं, परन्तु अपने प्रति भले नही हैं। वे अपने शरीर के स्वास्थ्य का ख्याल नही रखते। वे अपनी शक्तियो का संग्रह नही करते, वे अपने साधनो को एकत्र नही करते, वे दूसरो के सेवक हैं, पर अपने प्रति अत्याचारी हैं। दूसरो के प्रति ईमानदार होना एक उत्तम गुण है, पर अपने प्रति ईमानदार होना भी उतना ही आवश्यक है। हमारा हित-चिन्तन न करना उतना ही बडा पाप है, जितना कि दूसरे का हित-चिन्तन न करना। मनुष्य का यह पवित्र कर्त्तव्य है, कि वह शारीरिक रूप मे तथा मानसिक रूप मे अपने आप को ऊँची से ऊँची सतह पर रक्खे, नही तो वह संसार को वह संदेश न दे पायेगा, जिसके लिये उसने संसार में जन्म लिया है। प्रत्येक मनुष्य का यह पवित्र कर्त्तव्य है, कि वह अपने आपको उत्तम स्थिति में रक्खे तभी वह अपना सबसे उत्तम कार्य कर सकता है। यह बडा भारी पाप है कि मनुष्य अपने आपको टूटी-फूटी, गिरी-पडी अवस्था मे रक्खे। ऐसा करने से वह समय की माँग को पूर्ण करने मे समर्थ नही हो सकता। वह संकट आने पर साहस के साथ उसका सामना नही कर सकता।

स्वामी रामतीर्थ ने एक जगह कहा हैं कि सफलता प्राप्ति का सर्वोच्च उपाय उसकी निर्भीकता हैं। और इस निर्भीकता के लिये यह आवश्यक हैं कि वह अपनी आत्मा को पहचाने। आत्मा इतनी सम्पन्न और बलशाली हैं कि उसका यम भी कुछ नही बिगाड सकता। देखिये—'

अणो रणीयान, महतो महीयान
आत्मास्य जन्तोर्निहितो गुहायम्।
तमक्रतु पश्यति वीत शोको
धातु प्रसादान्महिमा नमात्मन ॥

आत्मा मयमितो येन
यमस्तस्य करोति किम् ॥

—महाभारत

फलत' जो अपनी आत्मा को पहिचान लेता हैं, वही अपने आप को पहचान सकता है। बाइबिल का कथन है कि जीवन - यात्रा मे सहस्रो आदमी आत्मा के द्वार तक पहुँचते है किन्तु ऐसे थोडे ही होते हैं, जो उसमे प्रवेश पा सकते है। (Strait is the gate that lead the unite life, and few there be that find it, few are chosen through me come

—Bible

हमारा असली व्यक्तित्व तो इच्छाओ के हजारो रगीन पर्दों मे छिपा हुआ होता है, अत उसके मूल स्वरूप को पहचानना बडा भारी काम होता है—

न कोई परदा है उसके दर पर
न रूहे रोशन नकाब मे है
तू आप अपनी खुदी से ऐ, दिल।
हिजाब मे हैं, हिजाब मे है ॥

बाइबिल ने भी ईश्वर के मन्दिर को अपने अन्त करण मे ही स्थित माना है—

'Behold, the kingdom of God is within you, you are temple of God,' जो अपनी महत्ता जान लेता है, उसे फिर और कुछ जान लेने की जरूरत नही रहती।

महाभारत के अनुसार—

> हृदये नाम्यनुज्ञात. मन पूतं समाचरेत्
> स्वस्य च प्रियमात्मन ? परितोषोऽन्तरात्मन ।
> स्वस्य वान्तर पुरुष आत्मनस्तुनिष्ट रैव च
> क्षेत्रज्ञो नाभिशंकते यमो देवो हृदिस्थित ।
>
> —महाभारत

चीन के एक दार्शनिक ने कहा था—"What the undeveloped man seeks in others, what the advanced man seeks in himself."

स्पष्टत हमे चाहिये कि सर्व-प्रथम हम बाह्य विश्व मे झाँकने से पूर्व अपने आप मे झांक कर देखें। अपने आप को पहचानें। जो अपने आप को पहचान लेता है वह कभी भी ठोकर नही खा सकता, उसके चरण सदैव उन्नत पथ पर अग्रसर होते रहेगे।

महावीर अधिकारी हिन्दी के जाने माने लेखक हैं। उन्होने सफलता की सात सीढियां सुझाई हैं, वे इस प्रकार से है—

पहली–जब आप किसी से मिलें तो, अपने आप को भूल जाये। दूसरे आदमी को महत्त्व दीजिये, और वह क्या कहता है उसे गौर से देखिये।

दूसरी–यह सोच कर चलिये, कि दूसरे लोग आपको पसन्द करते ही है।

तीसरी–अपने आचरण मे दूसरो को यह समझने दीजिये कि उनका

अस्तित्व भी एक मूल्यवान अस्तित्व है।

चौथी–अपने दोषो को स्वीकार करने के लिये सदैव तत्पर रहिये। सभ्यतापूर्वक, आत्म-प्रतिष्ठा को सुरक्षित रखते हुए।

पाँचवी–कम से कम एक व्यक्ति को अपने जीवन मे ऐसा स्थान अवश्य दीजिये, जिसे आप पूरी उत्कृष्टता के साथ प्रेम करते हो।

छठी–सफल और संतोषी लोगो की संगति का लाभ उठाने के अवसर को हाथ से कभी न जाने दीजिये।

सातवी–बात चीत मे "मैं" शब्द का कम से कम प्रयोग कीजिये, और "आप" शब्द का अधिक से अधिक।

उपर्युक्त सात सीढियाँ निःसन्देह ऐसी सीढियाँ हैं, जिनके द्वारा मनुष्य उन्नति के द्वार तक पहुँच सकता है। सफल जीवन के लिये आवश्यक है, कि व्यक्ति मे प्रेम भावना जागरित हो। जिस व्यक्ति को निश्छल प्रेम करना नही आया, वह वस्तुत एक असफल पुरुष है। मनुष्य क्यो अपने बच्चो के लिये इतना कष्ट सहता है ? क्यो वह पत्नी के बीमार पडने पर रात अपनी आँखो मे निकाल देता है ? क्यो किसी सुहृद मित्र की बीमारी का समाचार सुनकर हृदय मे टीस सी उठने लगती है। इन सब का एक ही उत्तर है, और वह यह है, कि मानव बिना प्रेम किये जिन्दा नही रह सकता। प्रेम का हमारे जीवन मे कितना उच्च स्थान है। श्री रामनाथ सुमन ने इसे भली प्रकार समझाया है। उन्होने लिखा है कि "जीवन की सफलताएँ एवं सुविधाएँ तुम्हारा अभिनन्दन करती आएँगी, वे तुम्हे बडा सुख देंगी, यह भी मान लेता हूँ, तुम्हारा नाम हो सकता है। तुम नेता बन सकते हो, तुम उद्योगपति और धनपति भी हो सकते हो, परन्तु जब तक तुम्हारे जीवन मे प्रेम का तूफान नही आता तब तक सब कुछ प्राणहीन है, सब कुछ निरानन्द है, सब कुछ तुच्छ है। मैंने सैकडो ऐसे-ऐसे आदमियो को तडफते और मृत्यु की कामना करते देखा है,

जिनके इर्द-गिर्द सोने का अंबार लगा है। मैंने ऐसे आदमियो की जिन्दगी की कराहें सुनी हैं, जो देश मे पूजे जाते है। जिनके समाचार अखबारो मे मोटे शीर्षको से छापे जाते हैं। दूसरी ओर ऐसे लोगो को भी देखा है, जिनके पास कल खाने का ठिकाना नही है, पर जिनके हृदय हँसते हैं, आँखें हँसती है, गरीबी की चुनौती को चुनौती देकर हँसती आँखें, आशा और विश्वास से प्रदीप्त आँखें, स्नेह और प्रेम से मतवाली रस-पूर्ण आँखें। यह जो प्रेम है, यही जीवन है। यह जो प्रेम है, यही हमारी समस्त मानवता का झरना है। यह जो प्रेम है, यही जीवन को एक अर्थ, एक अभिप्राय, एक उद्देश्य देता है।

लॉगफेलो एक प्रसिद्ध लेखक हो चुका है, उसने कहा है, कि "सफलता की कुंजी सिर्फ यह है, कि वह काम करो, जो तुम अच्छी तरह कर सकते हो, और अपने हर काम को अच्छी तरह करते वक्त यश का ख्याल तक न आने दो।" वोल्टेयर ने प्रसन्न और मधुर रहना ही सफलता की परिभाषा बताई है, तो डिजरायली ने सफलता का रहस्य लक्ष्यसिद्धि मे देखा है। कन्फ्यूसियस ने सफलता को आँकते हुए कहा है कि सफलता पूर्व तैयारी का उचित नतीजा है। स्वामी रामतीर्थ बताते है कि जो परमात्मा मे लीन रहते है, वे ही भाग्यशाली सफल होते है। अथर्ववेद के एक मन्त्र का सार है कि सफलता पुरुषार्थ की पत्नी है। जहाँ पुरुषार्थ है, वहाँ निश्चित रूप से सफलता है।

उपर्युक्त सभी परिभाषाओ के अध्ययन से यह तो स्पष्ट है कि सफलता श्रम की अपेक्षी है। जहाँ श्रम है, पुरुषार्थ है, वही सफलता है, इसमें संदेह नही।

संतराम बी० ए० ने अपनी पुस्तक मे सफलता के दस महत्वपूर्ण गुर बताये है, जिनके अपनाने से व्यक्ति को सफलता निश्चित रूप से प्राप्त हो सकती है। ये दस गुर निम्न प्रकार से हैं—

१ सदा विवेकवान और अकपट रहिये ।

२. प्रत्येक रीति से अपने को सुधारिये ।

३ अपने काम मे अभिरुचि लीजिये ।

४ दायित्व ग्रहण कीजिये ।

५ सदैव प्रसन्न चित्त रहिये ।

६ प्रासंगिक कौशल प्राप्त करने का प्रयत्न कीजिये ।

७ सजग रहिये ।

८ प्रत्येक व्यक्ति के साथ अपने अच्छे सम्बन्ध बनाइये ।

९ सुस्ताना सीखिये, और

१० अपने काम मे रुचि लीजिये ।

नि सन्देह उपर्युक्त गुर व्यक्ति के जीवन मे महान् परिवर्तन ला सकते है । ये ऐसे गुर है, जो व्यक्ति के सच्चे मित्र बन सकते हैं ।

मनुष्य को सफलता प्राप्त नही होने का सबसे बडा कारण है कि वह साहसिक कार्यों से घबराता है, आगे बढकर परिस्थितियो से भिडने की उसमे क्षमता नही है, और पग-पग पर उसे आशंका बनी हुई है कि कही वह असफल न हो जाय ।

एक जापानी कहावत है, कि एक आदमी को एक भयंकर राक्षस सदैव परेशान करता था । वह जहाँ भी जाता, वह राक्षस उसे घेरे रहता था । न उसे दिन को चैन था और न उसे रात्रि को भरपूर नीद आती थी । उसका स्वास्थ्य घुल गया था, उन्नति के सभी द्वार बद-से हो गये थे और उस व्यक्ति का जीना दूभर-सा हो गया था ।

आखिर परेशान होकर उस राक्षस से व्यक्ति ने पूछा, आखिर तुम मुझ से चाहते क्या हो ? क्यो मेरा पिंड पकडे हुए हो ? मुझे छोड क्यो नही देते ? मैंने तुम्हारा क्या बिगाडा है ?

वह हँसा, बोला—"मैं क्या हूँ ? कुछ भी नही, मैं तो जो कुछ भी हूँ तुम्हारा ही तो बनाया हुआ हूँ। यह जो मेरा शरीर हृष्ट-पुष्ट है, वह तुम्हारे द्वारा ही तो निर्मित हुआ है। मुझे व्यर्थ का इल्जाम लगा रहे हो। इस परिस्थिति के जिम्मेदार तो तुम स्वयं ही हो।

जरा सोचिये, यह राक्षस कौन है ? जिसने उस व्यक्ति को दबोच रक्खा है, उसके सारे कार्यो पर निराशा की मुहर-सी लगा रक्खी है और उसकी उन्नति के सभी द्वार बन्द कर दिये है।

यह दानव राक्षस है भय। भय ही वह राक्षस है, जो मानव द्वारा निर्मित होने पर भी मानव पर हावी हो जाता है।

जब मनुष्य इस प्रकार के स्वयं निर्मित भय से आक्रान्त हो जाता है, तो वह घबरा-सा जाता है। उसकी विचार-शक्ति कुंठित हो जाती है। उसे पग-पग पर आशंकाएँ खडी मिलती हैं। वह कदम-कदम पर असफलताओ के चरण-चिह्न देखता है।

जिन्दगी एक सुन्दर रंगीन स्वप्न है। यह ऐसी शानदार है कि जिसे देखते हुए हम कभी अघाते नही, फिर ऐसी मधुर जिन्दगी पर भय का हौआ क्यो हावी होने दें। उठिये ! आज ही प्रण कीजिये, कि आप साहस से, शक्ति से, और हिम्मत से कर्म क्षेत्र मे कर्त्तव्य-पथ पर आगे बढ़ेंगे, भय को पास तक न फटकने देंगे।

अन्त मे मैं सफलता के ग्यारह सोपान स्पष्ट कर रहा हूँ, जो उन्नत जीवन के दीप-स्तम्भ हैं, जिनपर चलकर मनुष्य सहज ही सफलता के द्वार खटखटा सकता है। वे सोपान निम्न है—

१ हँसते-हँसते जिन्दा रहे। चाहे कैसी भी तकलीफ क्यों न आ जाय, आप घबरायें नही।
२. व्यक्तित्व की ओर ध्यान दें। व्यक्तित्व आपके जीवन का सर्वप्रमुख साथी है, उसे छोडें नही।

३. निराशा पर विजय प्राप्त करने का प्रयत्न करें—ऐसा न हो, कि वह आप पर हावी हो जाय ।

४. अपनी आन्तरिक शक्ति को पहचानिये और उसे अपना साधन बनाइये ।

५. विश्वास रखिये । संकटो, बाधाओ एवं विपत्तियो मे भी विचलित मत होइये ।

६. लोकप्रिय बनिये । अपने व्यवहार, कार्य एवं बातचीत से दूसरो के दिल जीतने की कोशिश करिये ।

७ परिश्रमी बनिये । परिश्रम ही जीवन का सफल मूलमन्त्र है, इसे ध्यान मे रखिये ।

८ चरित्रशील बनिये । चरित्र ही जीवन धन है, इसे मत भूलिये ।

९. जीने की कला सीखिये—ऐसा न हो कि आपका जीवन नीरस और बेस्वाद-सा हो जाय ।

१० सयम और साहस को अपना मित्र बनाइये, ये आपके सच्चे हितैषी रहेंगे ।

११ ईश्वर पर आस्था रखिये—वह आपके जीवन मे आस्था का पौधा पल्लवित करेगा ।

युवको ! उठो !! सफलता का मन्दिर तुम्हारे सामने है। सीढियाँ तुम्हे स्पष्ट दिखाई दे रही है । रुकिये नही । एक क्षण का भी विलम्ब तुम्हारे लिये घातक है । भले ही तुम्हे अनन्त कष्टो का सामना करना पडे, तुम रुको नही, आगे बढो । सफलता की देवी तुम्हारे चरण कमलो मे झुकने के लिये तैयार है । उठो ! बढो !!

# जहाँ धर्म तहँ जीत है !

जीवन-धारा दो मार्गों में प्रवाहित होती है—एक श्रेय का मार्ग है, दूसरा प्रेम का। प्रेम का मार्ग बन्धन का होता है, श्रेय का मुक्ति का—नि.श्रेयस् का। प्रेम कामी से श्रेय दूर चला जाता है; परन्तु श्रेयकामी से प्रेम अलग नही रहता। वह श्रेयकामी का सहयोगी बन जाता है। जीवन की श्रेय—परक दृष्टि धर्म कहलाती है। प्रेम, अर्थ और काम, धर्म के सहयोगी होते हैं। जीवन को गति मानें तो गति का प्रेरक काम है और गति का साधक अर्थ। नि श्रेयस् इस गति का उद्देश्य है जहाँ तक पहुँचने के लिए धर्म गति का मार्ग निर्धारित करता है।

सृष्टि के प्रत्येक पदार्थ का अपना धर्म होता है। सूर्य का धर्म प्रकाश और ऊर्जा का वितरण करना है, चन्द्रमा का शीतलता व रस प्रदान करना, अग्नि का धर्म जलाना है, तो वायु का धर्म वहना। प्रकृति के इन विविध उपादानो से प्राणी अपने लिए उपयोगी तत्व ग्रहण करता है। इस प्रकार अपनी उपयोगिता सिद्ध कर लेना उसकी प्रेम-परक दृष्टि का सूचक है। जब इस दृष्टि को श्रेय-परक बना कर वह अपने सामाजिक उत्तरदायित्व को वहन करता और इस प्रकार अपने जीवन को सार्थकता प्रदान करता है तो इस प्रकार वह अपने धर्म का पालन करता है।

मानव शरीर मे मन समेत ११ इन्द्रियाँ है। श्रेयपरक-दृष्टि का प्रभाव उन सभी इन्द्रियो पर पडता है। जब मनुष्य की वाणी मे सत्य का निवास हो, शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध आदि विविध विषयों में शुभसंचय और अशुभ निवारण की दृष्टि उत्पन्न हो जाय, कर्म करने में सदुद्देश्य से प्रेरणा प्राप्त करने लग जाय, मनन या विचार करने मे

लोकहित की दृष्टि प्रधान हो जाय तो सोच लेना चाहिए कि जीवन मे धर्म-तत्त्व की प्रधानता हो गई है। धर्माचरण इसके अतिरिक्त और कुछ भी नही है। मनुष्य के लिए यही शाश्वत-सनातन धर्म है। हिन्दु, इस्लाम, ईसाई, जैन, बौद्ध आदि की संज्ञा मत है, धर्म नही। इन मतो का प्रादुर्भाव धर्म के कतिपय तत्त्वो का परिचय कराने के लिये हुआ है। इसलिए ये मत तो साधन है धर्म की ससिद्धि के मार्ग है। वास्तविक धर्म क्षेत्रीय या वर्गीय बन्धनो मे नही बधता। वह मानव मात्र के लिए होता है। इस धर्म को नाम देना आवश्यक ही हो तो मानव-धर्म नाम दिया जा सकता है।

इस धर्म के लक्षण क्या है ? मनु का कहना है कि 'विद्वानो, सज्जनो और रागद्वेष से रहित मनुष्यो द्वारा सेवित तथा हृदय से प्रेरित आचरण ही धर्म है।'—उनके अनुसार 'सन्तोष, क्षमा, मन. संयम्, चोरी न करना, शुद्धता, इन्द्रियनिग्रह, बुद्धिमत्ता, विद्या, सत्य, अक्रोध ये दस धर्म के लक्षण है।'

याज्ञवल्क्य के अनुसार 'कर्म करना, सहिष्णुता, अहिंसा, दान, स्वाध्याय आदि धर्म के लक्षण हैं। प्राणी-मात्र मे आत्मीयता के दर्शन करना परम धर्म है।'

धर्म के लक्षण लोगो ने अनेक प्रकार से किए है इसलिए इनमे समन्वय स्थापित करने के लिए महाभारत मे कहा गया है कि 'सब धर्मो को सुनो और मनन करो। जो अपने प्रतिकूल हो वैसा आचरण दूसरो के साथ मत किया करो।' महात्मा ईसा ने भी कहा है कि—'दूसरो के साथ वैसा आचरण करो जैसा तुम दूसरो से अपने प्रति करवाना चाहते हो।'

इससे स्पष्ट है कि सहानुभूति, क्षमा, दया, दान, स्वाध्याय, अचौर्य, सत्य, अहिसा आदि मानवीय गुणो की संज्ञा ही धर्म है। ये गुण विश्व भर के मनुष्यो के लिए अनुकरणीय आदर्श रहे है।

सत्य धर्म के आदर्श हैं—राजा हरिश्चन्द्र, महात्मा सुकरात, गोपाल कृष्ण गोखले आदि।

राजा हरिश्चन्द्र अयोध्या के राजा थे। वे अपनी सत्यप्रियता के लिए प्रसिद्ध थे। विश्वामित्र ने उनकी परीक्षा लेने के लिए स्वप्न में उनका सारा राज्य दान मे माग लिया। हरिश्चन्द्र ने सत्य की रक्षा के लिए स्वप्न मे दिये हुए दान को वास्तविक रूप प्रदान किया। वे विश्वामित्र को राज्य सौंप कर वन को चल दिये। विश्वामित्र ने इस अनुष्ठान की दक्षिणा के रूप मे एक सहस्र स्वर्णमुद्राएँ मांगी। राजा ने स्वयं को एक चाण्डाल को और अपनी पत्नी और पुत्र को एक ब्राह्मण को बेच कर दक्षिणा चुकाई। अयोध्या का सम्राट् श्मशान मे चाण्डाल की ओर से कर इकट्ठा करने लगा और उसकी पत्नी ब्राह्मण की सेवा करने लगी। एक दिन हरिश्चन्द्र के बेटे रोहित को सांप ने काट खाया और वह मर गया। रानी रोहित का शव लेकर श्मशान मे जलाने गई। वहाँ हरिश्चन्द्र ने नियमानुसार कर माँगा। उसने पुत्र और पत्नी को पहचान लिया परन्तु वह विचलित न हुआ। अन्त मे रानी ने शवाच्छादन मे से आधा वस्त्र फाड कर, कर के रूप मे दे दिया। उसी समय देवराज इन्द्र, धर्मराज और विश्वामित्र वहाँ प्रकट हो गये। राजा परीक्षा मे खरा उतरा। सत्यवादी के रूप मे राजा हरिश्चन्द्र अमर हो गया।

सुकरात यूनान के महान् दार्शनिक थे। वे घूम-घूम कर लोगो को सन्मार्ग पर चलने का उपदेश दिया करते थे। उनकी लोकप्रियता से घबरा कर कुछ स्वार्थी लोगो ने उन पर आरोप लगाया कि वे सत्योपदेश के नाम पर लोगो को बहकाते हैं। एथेंस के न्यायालय ने उनको विषपान करके मृत्यु को वरण करने का दण्ड दिया। उन्होंने शान्तभाव से दण्ड को स्वीकार कर लिया। उनके शिष्यो ने कारागार से उन्हें बचा कर निकाल लेने का प्रबन्ध किया; किन्तु उन्होंने सत्य की रक्षा के लिए प्राण त्याग देना ही उचित समझा। अपने देश के न्याय को

सर्वोपरि मान कर सुकरात ने निश्चित दिन विषपान कर लिया और वे तब तक उपदेश देते रहे जब तक कि विष के प्रभाव से उनकी वाणी रुक न गई ।

गोपालकृष्ण गोखले भारतीय स्वाधीनता संग्राम के प्रमुख सेनानी थे । जब वे बालक थे तो एक दिन पाठशाला मे शिक्षक ने उनके सब प्रश्नो के उत्तर सही पाकर उनको पुरस्कार देना चाहा । बालक गोखले इस पर फूट-फूट कर रोने लगे और बोले—"मैंने इनमे से एक प्रश्न अपने मित्र से पूछ कर किया है और इस प्रकार आपको धोखा दिया है । इसलिए मुझे पुरस्कार के स्थान पर दण्ड दीजिए ।" उनकी सत्य प्रियता से प्रभावित होकर शिक्षक ने उन्हे सत्यप्रियता के लिए पुरस्कृत किया ।

किसी की कोई वस्तु न लेना अस्तेय है । मानवधर्म का अस्तेय भी अंग है । सभी देशो मे अस्तेय व्रत को पालन करने वाले व्यक्ति मिल जायेंगे । शख और लिखित नामक दो भाइयो की कहानी पुराणो मे मिलती है । एक वार लिखित ऋषि अपने भाई शंख के आश्रम मे गये । आश्रम मे उस समय शंख नही थे । भूख के कारण लिखित ने उपवन से एक फल तोड लिया और खाना प्रारम्भ कर दिया । तभी वडे भाई शंख आगये । दोनो भाई गले मिले । शंख बोले—'भाई ! तुमने मेरी अनुपस्थिति मे उपवन का फल तोडा है । यद्यपि तुम मेरे भाई हो, किन्तु धर्म के अनुसार यह चोरी है । अत. तुम्हे राजा के पास जाकर इस दुष्कर्म के लिए दण्ड पाना चाहिए ।'

वडे भाई की आज्ञा पाकर लिखित राजा के पास गये और नियमा-नुसार दण्ड देने का आग्रह किया । राजा ने दण्ड विधान के अनुसार लिखित के दोनो हाथ कटवा दिये । लिखित प्रसन्न होकर बड़े भाई के पास आगये । सन्ध्यावन्दन के समय सूर्य को जलाजलि देने को तत्पर लिखित ने देखा कि उनके हाथ यथावत् हो गये हैं । लिखित को आश्चर्य मे पडा हुआ देख कर शख बोले—'भाई ! दण्ड पा लेने से अपराध समाप्त हो जाता है । अपराध को छुपाना पाप है और दण्डनायक के

[illegible] स्वीकार कर लेना पुण्य है । इसी पुण्य के फल से तुम्हे हाथ पुनः प्राप्त हुए ।'

आत्म-संयम के विपय मे यहूदी धर्म मे मान्यता है कि जो अपनी वासनाओ को जीत लेता है वही शक्ति सम्पन्न है । बुद्ध ने भी कहा है कि—'स्वयं को जीतना दूसरो को जीतने से अच्छा है । इसलिए आत्म-संयम के लिए प्रयत्न करते रहना चाहिए ।' जैन ग्रन्थ उत्तराध्ययन सूत्र मे कहा गया है कि—'अपने आपको जीतना वडा कठिन है, परन्तु जब ऐसी विजय प्राप्त हो जाती है, तो सब कुछ जीत लिया जाता है ।' अन्यत्र कहा गया है कि 'मनुष्य को त्रिविध विजय प्राप्त करना चाहिए—शरीर पर विजय, वाणी पर विजय और मन पर विजय ।'

महाराज छत्रसाल इन्द्रियजयी थे । एक बार वे प्रजा की दशा देखने के लिए नगर मे घूम रहे थे । एक स्त्री ने उन्हे बुलाया और कहा—'महाराज, मैं वडी दुखिया हूँ । आप मेरा कष्ट दूर कीजिए । मेरे सन्तान नही है । मैं आपके समान पुत्र चाहती हूँ ।' छत्रसाल उस स्त्री की बात सुनकर और उसकी कामोत्तेजक चेष्टाओ को देखकर स्तब्ध रह गये । क्षण भर मे सावधान होकर बोले—'मात. आप मेरे जैसा पुत्र चाहती हैं तो मैं प्रस्तुत हूँ । आज से मैं आपका पुत्र हुआ ।' उन्होंने उस स्त्री के चरण छू लिये और आजीवन उसका राजमाता के समान सम्मान किया ।

प्रेम और सेवा मानव धर्म के आदर्श लक्षण हैं । कोलरिज ने कहा है कि 'छोटी और वडी सभी वस्तुओ को जो प्रेम करता है वही सच्ची प्रार्थना करता है क्योकि—परमप्रिय ईश्वर ने सबको बनाया है और वह सबको प्यार करता है ।'

आदम के पुत्र अबु ने एक दिन देखा कि एक देवदूत अपने पास कुछ बातें लिखता जा रहा है । अबु के पूछने पर देवदूत ने बताया कि वह उन लोगो के नाम लिख रहा है जो परम पिता परमेश्वर को प्यार करते हैं । अबु ने प्रार्थना की कि वह उनका नाम उस सूची मे लिखने

जो मनुष्य को प्यार करते है । देवदूत चला गया । दूसरे दिन देवदूत ने आकर सूची दिखाई । अबु का नाम उस सूची मे सबसे ऊपर लिखा गया था जो ईश्वर को प्रेम करते है ।

महाभारत के अनुसार जो सबका मित्र है, जो सबके हित मे लगा हुआ है वही धर्म को जानता है । मुहम्मद साहब ने कहा है कि "जो खुदा के बन्दो को प्रेम नही करता, खुदा उससे प्रेम नही करता" तथा "दीन दुखी की सहायता करो चाहे वह मुस्लिम हो या गैर-मुस्लिम ।' उनके अनुसार सर्वोत्तम कार्य है—मानव मात्र के हृदय मे सुख भर देना, भूखे को भोजन कराना, दीन की सहायता करना और दुखी के दु:ख को दूर करना । बाइबिल के अनुसार प्रेम ही ईश्वर है । जो मनुष्य अपने मित्र के लिए प्राण बलिदान कर देता है, ईश्वर सबसे अधिक उसको प्यार करता है ।

प्रेम की सार्थकता सेवा मे है । बुद्ध ने कहा है कि सहस्त्र वर्ष तक जीवित रह कर अग्नि मे आहुति देते रहना भी शुद्ध प्रेमयुक्त क्षण भर जीवन बिताने की समानता नही कर सकता । जो मनुष्य संसार के सभी प्राणियो से प्रेम करता है, दूसरो के हित के लिए आचरण करता है वही इस ससार मे सुखी है । इसलिए हे भिक्षुओ, बहुजनो के हित के लिए, बहुजनो के सुख के लिए विचरण करते रहो ।

बालक सिद्धार्थ जन्म से ही भावुक थे । वे कभी किसी का दु:ख नही देख सकते थे । एक बार उनके चचेरे भाई देवदत्त ने उडते हुए एक हस को तीर का निशाना बनाया । हंस लोहू-लुहान होकर जमीन पर गिर पडा । सिद्धार्थ ने दौड कर हंस को उठा लिया । उसकी दवा दारू की । देवदत्त सिद्धार्थ से हंस माँगने लगा क्योकि उसे उसने ही मार कर गिराया था । सिद्धार्थ ने हस नही लौटाया । देवदत्त ने महा-राज शुद्धोधन से शिकायत की । सिद्धार्थ बोले—"देवदत्त ने हंस को तीर मार कर गिराया अवश्य है, परन्तु उसे तीर मारने का अधिकार किसने दिया । मैंने इसकी सेवा करके इसके प्राण बचाए है । इसलिये

हंस मेरा है।" शुद्धोधन ने निर्णय दिया कि मारने वाले से अधिक सेवा करके बचाने वाले का अधिकार है। अत. हंस सिद्धार्थ का ही है। सिद्धार्थ ने हंस को उडा दिया।

मध्यकाल मे यूरोप मे फ्राँसिस नामक प्रसिद्ध सन्त हुए हैं। उन्होने वडे घर मे जन्म लेकर भी सब कुछ छोड कर जन-सेवा का मार्ग अपनाया। वे दरिद्रनारायण के सेवक थे। उनको कोढ़ियो के भाई कहा जाता है क्योकि वे कोढी की भी दत्तचित्त होकर सेवा करते थे।

महात्मा गाधी ने भी सेवाधर्म अपनाने पर वल दिया था।

एक वार श्रावस्ती मे भयंकर अकाल पडा। सम्पन्न लोगो ने आत्मत्राण के लिए अपने पास अन्न इकट्ठा कर लिया। निर्धन भूख के मारे तड़फ-तडफकर प्राण देने लगे। तथागत गौतम ने प्रश्न किया भरी सभा मे—कि क्या इस भयंकर दुर्भिक्ष मे जनत्राण करने वाला कोई प्राणी नही रह गया है ? सब इधर-उधर झाँकने लगे। तभी एक मधुर आवाज आई अनाथपिण्डक नगर श्रेष्ठी की कन्या की—'स्वामी, मैं लोगो को अकाल से मुक्त करूँगी।' तथागत ने पूछा—'कैसे, भद्रे ! लोगो के भूख की ज्वाला को तुम कैसे शान्त करोगी ?' कन्या बोली—'भगवन् ! भिक्षा पात्र लेकर मैं श्रावस्ती के राजपथ पर अन्नदान लेने के लिए घूमूँगी। मैं समझती हूँ जन सेवा के लिए हाथ मे लिया हुआ भिक्षा-पात्र कभी खाली न होगा।' सचमुच उसकी सेवाभावना से प्रभावित होकर धनपतियो ने अन्नभण्डार खोल दिये और महामारी मे श्रावस्ती को मुक्ति मिल गई।

दया और दान भी मानव धर्म के अंग है। वेद मे कहा गया है—'सौ हाथो से इकट्ठा करो और हजार हाथो से दान करो।' कबीरदास ने दया को धर्म का मूल बताया है। कुरान के अनुसार उत्तम दान वह है जिसे दाहिना हाथ दे और बायाँ हाथ भी न जाने। अन्यत्र उन्होने कहा है कि 'पूर्ण मुसल्मान वह है जिसकी वाणी से और जिसके हाथो से मानवमात्र सुरक्षित रहता है। दीनो पर दया करने वालो मे तथा अभावग्रस्त की सहायता करने वालो मे ईश्वर भी प्रसन्न रहता है।

अब्दुल्ला बिन मुबारक एक सूफी सन्त थे। हज से फारिग होकर वे काबा मे सो गये। उन्होने स्वप्न देखा कि एक फरिस्ता दूसरे से पूछ रहा है—'इस साल हज करने कितने लोग आये और कितने लोगो का हज कबूल हुआ।'

दूसरा फरिश्ता बोला—'हज करने तो लाखो आये पर एक आदमी का हज कबूल हुआ जो वास्तव मे हज करने आया ही नही। वह दमिश्क का एक मोची है अली बिन मूफिक।'

अब्दुल्ल दमिश्क मे उस मोची से मिलने गये। पूछने पर मोची ने बताया कि उस की हज करने की बडी इच्छा थी। इसके लिए उसने ७०० दिरम (सिक्के) इकट्ठे किये थे, परन्तु मालूम पडा कि पडौसी के बच्चे ७ दिन से भूख के मारे तडफ रहे है। सो वह रकम उसकी पत्नी ने गरीब पडौसी की मदद के लिए दे दिये।

इसी तरह का काम सन्त एकनाथ का है। वे गंगोत्री की यात्रा करके लौट रहे थे। कावड मे रामेश्वर पर चढाने के लिए गंगाजल ले रक्खा था। मार्ग मे उन्होने प्यास से तडफते हुए एक गधे को देखा। उन्होने वह सारा गगाजल गधे को पिला दिया। उनके साथी कहने लगे कि उनका श्रम व्यर्थ गया क्योकि रामेश्वर पर चढाया जाने वाला पवित्र जल उन्होने गधे को पिला दिया है, परन्तु उन्हे सन्तोष था कि रामेश्वर ने ही साकार उपस्थित होकर गंगाजल ग्रहण किया है।

अमरीका के भूतपूर्व प्रेसीडेंट अब्राहम लिंकन एक दिन राज्य सभा मे कीचड से लथपथ कपडो मे पहुँचे। लिकन ने बताया कि मार्ग मे एक सूअर कीचड मे फँस गया था। वे उसकी यह दशा न देख सके और उसे निकाल कर ही राज्य सभा की बैठक मे आ सके। समय इतना कम था कि कपडे तक न बदल सके।

राजा भोज के राजकवि ने मार्ग मे एक व्यक्ति को पैदल जाते हुए देखा। गरमी बडी भयकर थी और उस व्यक्ति के पैरो मे जूते नही

थे। कोमल हृदय कवि ने अपने पैरो का जूता उसे दे दिया। कवि नंगे पैर जलती हुई दुपहरी मे आनन्दपूर्वक चलने लगे। थोडी दूर चलने पर एक महावत ने राजकवि को हाथी पर बिठा लिया। संयोग से मार्ग मे रथ मे बैठे हुए राजाभोज मिले। भोज ने पूछा—'कवि, यह हाथी कहाँ से मिला ?' कवि बोले—

उपानह् मया दत्तं जीर्णं कर्णाविवर्जितम् ।
तत्पुण्येन गजारुढो न दत्तं वै हि तद् गतम् ॥

अर्थात हे राजन् ! मैंने अपना फटा पुराना जूता दान कर दिया, उस पुण्य से हाथी पर बैठा हूँ। जो धन दिया नही जाता वह तो व्यर्थ ही है।

भारत मे तो 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना पर बल दिया जाता है। सत्य, प्रेम, दया, सहानुभूति आदि के द्वारा ही संसार मे एक-परिवार के सदस्य होने की भावना प्रादुर्भूत होती है। सभी मतो मे इन मानवतावादी आदर्शों को जीवन मे उतारने पर बल दिया गया है। इंजील मे कहा गया है कि हम सब एक दूसरे के सहभागी हैं। ईश्वर ने सभी कौमो को, जो धरती पर निवास करती है, एक ही खून से बनाया है।

आत्मा सच्चिदानन्दमय है। सत्य प्रेम आदि आत्मा के गुण हैं। इन गुणो को जीवन मे उतार कर अपने मे ही आत्मा की खोज की जाती है। यही योग द्वारा आत्मदर्शन का मार्ग है जिसे याज्ञवल्क्य ने परम धर्म कहा है। चीनी महात्मा कन्फ्यूशियस ने कहा है कि 'अनजान आदमी दूसरो को ढूंढता है, जानकार अपने खोजता है।'

मानव-धर्म का पालन करने से यह अपनी खोज सफलता प्राप्त करती है। योगेश्वर कृष्ण ने इसीलिए कहा है—यतो धर्मस्ततो जयः। जब मानवता की जीत होती है तो सारे संघर्ष समाप्त हो जाते है और सच्चे ईश्वर-राज्य की स्थापना हो जाती है। इसीलिए इंजील मे कहा गया है—'धर्म पर चलो बाकी सब चीजें तुम्हे अपने आप मिल जावेंगी।'

## स्वतन्त्रता की पृष्ठभूमि

हम स्वतन्त्र राष्ट्र है। हजारो वर्षों के इतिहास की पृष्ठभूमि मे हमारे जातीय जीवन का विकास हुआ है। पराधीनता के अन्धकाल मे हम अपनी जातीय-गरिमा को भूल गये थे। अब स्वाधीनता के अरुणोदय के साथ ही जिन उत्तरदायित्वो को हमने अपने ऊपर लिया है उनमे से एक उस विस्मृत गरिमा को पुनर्जीवित करके युगानुरूप राष्ट्रीय जीवन-दर्शन को विकसित करना भी है।

हमने अपने राष्ट्र को गणतन्त्र के रूप मे व्यवस्थित करने का संकल्प किया है। हमारी शक्ति गण या समाज मे निहित है। इसलिए इस नवीन उत्तरदायित्व को निभाने के लिए हमे विशेष प्रयत्नशील होना होगा। हमारे प्रयत्न की दिशा होगी—सामाजिक आस्था के माध्यम से सर्वोदय की ओर बढना। हमारे स्वराज्य की पृष्ठभूमि सामाजिक आस्था होगी और लक्ष्य है सर्वोदय—सबका उत्थान।

जिस सामाजिक आस्था की बात यहाँ कही गई है वह आज के प्रचलित समाजवाद के विचार से थोडी भिन्न है। समाजवाद एक सुदूरवर्ती आदर्श है जिसकी सिद्धि के लिए संसार के एक भाग मे हिसा का मार्ग अपनाने की वात कही जाती है, दूसरे भाग मे शान्तिमय तरीको से समाजवाद लाने का विचार किया जाता है। दोनो ही मतो के अनुसार समाजवाद दूर से दूर होता जाता है और उसका सुफल लोगो को तत्काल मिलने की सम्भावना नही हे। जव इन दोनो उपायो मे से कोई उपाय पूरी तरह सफल हो जावेगा तभी सामाजवाद आयेगा और वहुसख्यक वर्ग को उसके लाभ मिलेंगे। रूस का साम्यवाद भी सच्चे अर्थों मे समाजवाद नही है और चीन तो ममाजवाद की

शवपूजा की तैयारी कर रहा ज्ञात होता है। पूंजीवादी राष्ट्रों का समाजवाद तो समाज के कतिपय लोगों तक ही सीमित है। अब देखना है कि भारतीय नागरिक अपने राष्ट्र को उन्नत बनाने के लिए नीति और धर्म पर आधारित किस प्रकार की सामाजिक आस्था को अपने जीवन मे उतारें ?

समाजवादी विचारो की खींचतान से बचकर हम भारतीयो को हमारे समाज मे व्याप्त उन तत्त्वों का आश्रय लेना चाहिए जो हमको अतीत की वैचारिक निधि से दूर किये बिना वर्तमान युग के सर्वोच्च सामाजिक आदर्शों की प्राप्ति मे सहायक हो सकें। बाहर से आये हुए आदर्श जिस मार्ग का निर्माण कर सकते है वह न केवल हमारे लिए अपरिचित ही होगा और इसलिए स्थान-स्थान पर अवरोध आने पर हमे विदेशो की ओर ताकना होगा, वरन् हमारे राष्ट्रीय-जीवन दर्शन के लिए पराया होने से हानिकर भी हो सकता है। हमारा मार्ग अपना हो, आदर्श अपने हो और यह अपनापा न केवल संसार के अन्य राष्ट्रो के समान उन्नति करने मे, वरन् उनसे भी आगे बढने मे योग दे सके तभी हमारे व्यक्तिगत व सामाजिक-जीवन की सार्थकता है।

किसी समय यह विश्वास किया जाता था कि कोई दिव्य-स्वर्ग लोक है, जो पुण्यशील को मृत्यु के उपरान्त मिलेगा। परन्तु शताब्दियों पहले हमारे पूर्वजो ने कहा कि 'माता और मातृभूमि स्वर्ग से भी बढकर है'—जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी। जन्मभूमि स्वर्ग से बढकर है तो उसकी व्यवस्था को स्वर्ग से भी अधिक अच्छा बनाने का प्रयत्न भी हुआ। रामराज्य युग-युग के लिए आदर्श बन गया—उत्तम व्यवस्था का। भारत में हिन्दुओ के अतिरिक्त मुसलमान, ईसाई और पारसी लोग भी रहते है, वे भी ईश्वरीय साम्राज्य या हकूमते इलाही की स्थापना को आदर्श मानते है। सभी के आदर्श एक है तो प्रयत्न भी सबको एक होकर करना चाहिए।

आत्मा विश्वात्मा मे अपना अस्तित्व खोना चाहती है, खुदी-खुदा मे मिटना चाहती है, यही व्यक्ति का समाज-परक दृष्टिकोण है । यह ऐसा बडा आदर्श नही है जिसे प्राप्त करने के लिए पर्याप्त समय तक प्रतीक्षा करने की आवश्यकता हो । यह तो जीवन की एक दृष्टि है जिसका उपयोग जीवन-निर्माण के लिए किसी भी क्षण से किया जा सकता है । इसका सम्बन्ध समाज के बहुसख्यक वर्ग से नही है वरन् व्यक्ति से है । समाजवाद लाने के लिए प्रतीक्षा करनी होगी । सबके हृदय बदलने की अथवा पूँजीपतियो को नष्ट करके सर्वहारा वर्ग को सत्ता सौपने की, परन्तु उपर्युक्त दृष्टि के लिए इतनी प्रतीक्षा करने की आवश्यकता नही है । लक्ष्य स्पष्ट है और मार्ग सरल है । लक्ष्य का परिचय कराने वाले धर्मशास्त्र है, विद्वानो की वाणी है, पूर्वजो के अनुभव है । इसी तरह मार्ग को बताने वाले सन्त है, सन्तो के प्रेरक वचन हैं ।

मनु ने कहा है—
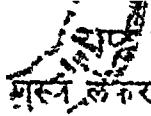
सर्वभूतेषु चात्यानं सर्वभूतानि चात्मनि ।
समं पश्यत् आत्मयाजी स्वाराज्यम् अधिगच्छति ।।

अर्थात् जो प्राणी सव प्राणियो के अन्दर अपनी आत्मा को और अपने अन्दर सब प्राणियो को बराबर देखता है और इस दृष्टि को पाने के लिए स्वयं को समर्पित कर देता है वही स्वराज्य को प्राप्त करता है ।

आन्तरिक स्वराज्य से ही बाहरी स्वराज्य प्रादुर्भूत होता है । इसीलिए इस कथन मे हमारी राष्ट्र-निर्माण की अपनी समस्या का सर्वमान्य समाधान मिल जाता है । जिसने यह मार्ग अपना लिया वही नि स्वार्थ, परोपकारी और बुद्धिमान् हो जायेगा ।

स्वराज्य का तात्पर्य है 'स्व' या अपना 'आपा' राजमान-दीप्तिमान हो, सर्वोच्च-गुणो से विभूपित होकर चमके । व्यक्ति की इस उन्नति के साथ, जिस समाज का अंग बन कर वह कह रहा है, वह समाज भी उन्नति करेगा । राष्ट्र-निर्माण का सच्चा मार्ग निकल आयेगा ।

राष्ट्र की उन्नति के लिए उत्पादन भी बढाना होगा, रक्षा के लिए शस्त्र लेकर जूझना भी होगा, परन्तु ये सभी प्रयत्न तभी सफल हो सकते है जब अपना मार्ग अपनाने की स्वतन्त्रता हो, मिलकर काम करने की उत्कट भावना हो और इसके लिए समान अवसर हो। चीनी महात्मा लाओत्से ने कहा है कि 'हमे परमेश्वर से तीन प्रकार की प्रेरणाएँ मिलती है—एक, हम सब चीजो का उत्पादन करें; परन्तु किसी भी चीज को केवल अपनी न समझें, दूसरी, सब काम करें; परन्तु अहं भावना से बचते रहे, तीसरी, सबको आगे बढावें पर किसी पर हावी होने की इच्छा न करें। ईश्वर सबको पैदा करता है, संसार को चलाता है; किन्तु न तो वह दिखाई देता है और न अपना स्वामित्व जताता है।'

स्पष्ट है कि धन-दौलत तो पैदा करें पर उसे अपनी नही, समाज की सम्पत्ति समझें। 'सर्व भूमि गोपाल की' उक्ति भारत मे प्रचलित है। धन भी सब समाज का है। सामाजिक-हित के लिए उसका उपयोग होना चाहिए। एक सूफी सन्त ने कहा है—'जब लालच की भावना बीच मे आ गई तो हुनर छिप गया, जब खुदी बीच मे आगई तो खुदा ओझल हो गया। इनके आने से सैकडो परदे दिल से उठ-उठ कर आँख के ऊपर पड जाते हैं।

किसी समय "यथाराजा तथा प्रजा' की उक्ति प्रसिद्ध थी। अब समाज की शक्ति राजा मे निहित न होकर प्रजा मे निहित है। इसलिए सम्पूर्ण प्रजा को ही अपना दृष्टिकोण बदलना होगा। विद्वान् इस मार्ग पर चलकर सामान्य, अशिक्षित लोगो के लिए प्रेरणा-स्रोत बन सकते हैं।

इंजील मे कहा गया है कि 'अन्धा-अन्धे को रास्ता नही दिखा सकता। वह दूसरे को भी खन्दक मे डाल देगा।' इसलिए विद्या की ज्योति से जिन्होने प्रज्ञानेत्र प्राप्त कर लिए है वे ही आगे बढने व समाज को आगे बढाने मे पहल करें। उन्होने पथ-प्रदर्शन नही किया तो समाज आगे कैसे बढेगा। मुहम्मद साहब की एक हदीस है कि

'जब आलिम ( विद्वान् ) नेकी के रास्ते से हट जाता है तो सारा आलम गलत रास्ते पर चलने लगता है।'

विद्वान् सामाजिक प्रगति के पथ-प्रदर्शक बन कर केवल प्रजा को ही लाभान्वित नहीं करेंगे वरन् प्रशासको को भी संयत रख सकेंगे। शुक्रनीति मे कहा गया है कि 'जब विद्वान् अपने धर्म पर निर्भीक होकर डटा रहता है तब शस्त्रधारी क्षत्रिय (प्रशासक) भी अधर्म के मार्ग पर चलने का साहस नहीं कर सकते।'

प्रत्येक व्यक्ति का कर्त्तव्य है कि वह विद्या प्राप्त करके विद्वान् बने और सामाजिक कर्त्तव्यो को निष्ठापूर्वक पालन करता हुआ समाज और राष्ट्र को प्रेरणा देता रहे। सच्ची बात कहने मे उसे किसी से भयभीत नही होना चाहिए। निर्भयता ही मानवता की सर्वोच्च सिद्धि है।

सृष्टि बडी सुन्दर है। सौंदर्य का मूलाधार है—उचित सामंजस्य। वेदों के अनुसार समाज शरीर रूप है जिसमे सिर, हाथ, पेट, टाँगो आदि जैसा सुन्दर सामजस्य देखने को मिलता है। 'शेखसादी के अनुसार आदम की सब सन्तान एक दूसरे के हाथ-पैरो की तरह है।' शरीर मे विभिन्न अंगो का अपना-अपना उपयोग है उसी तरह समाज मे विविध वर्गो का उपयोग है। समाज शरीर का कोई अंग कट जाये या सड-गल जाये तो समाज अपंग होकर गतिहीन हो जायेगा। उसे सुन्दर बनाने के लिए उसके सब अंगो को यथोचित रूप मे कार्यरत बनाये रखना आवश्यक है। समाज मे व्यक्ति का विकास भी सामाजिक सामंजस्य को दृष्टिगत रखते हुए ही होना चाहिए।

समाज के सारे व्यक्ति न किसान हो सकते हैं, न नेता, विद्वान् या सैनिक। इसीलिए व्यक्तित्व के सर्वोत्तम विकास के नाम पर शिक्षा का एक ढाँचा बनाकर सबको उसमे दीक्षित करना व्यक्तित्व और राष्ट्रीय-समय का हनन करना है। समाज की विविध आवश्यकताओ के लिए पृथक्-पृथक् शिक्षा का प्रक्रम (Pattern) होना चाहिए और इनमे अपनी

[illegible]) प्रदर्शित करके दक्षता पाने के लिए सबको स्वतन्त्रता होनी चाहिए। एवं अपनी-अपनी क्षमता के अनुसार सामाजिक सुव्यवस्था मे सहायक बनें, कर्मठ बनकर समाज और राष्ट्र की धुरी का वहन करें, यही विचार हमारी शिक्षा का प्रेरणा स्रोत-होना चाहिए।

मध्यकाल मे भारत पराधीन था; परन्तु भारतीय जनता अपनी सांस्कृतिक एकता को अक्षुण्ण बनाये हुए थी। उस समय समाज का नेतृत्व सन्तो व भक्तो के हाथ मे था। इन लोगो ने भक्तिभाव को आधार मानकर समाज का संगठन किया था। भक्तिभाव की विशेषता है— पूर्ण समर्पण की भावना, निरभिमानता और महदोद्देश्य। इन विशेषताओ को आधुनिक-काल मे भी अपनाया जा सकता है। आज चरित्र मे मिथ्याभिमान के स्थान पर स्वाभिमान और आत्म-गौरव का भाव जगाने की आवश्यकता है। पूर्ण समर्पण का भाव भी जागना चाहिए। समर्पण किसके प्रति? मध्यकाल में भक्त—'त्वदीयं वस्तु गोविन्द तुभ्यमेव समर्पये'—कह कर अपने इष्टदेव के प्रति या 'नमो धर्माय महते' कह कर धर्म के प्रति आत्म-समर्पण किया करते थे। भक्ति का सर्वोच्च रूप आत्म-निवेदन है। आत्म-निवेदन किसी महान् सत्ता के प्रति हो सकता है और किसी सर्वोच्च भाव के द्वारा हो सकता है। आज के युग मे सर्वोच्च सत्ता राष्ट्र के रूप मे स्वीकार की जा सकती है। प्रत्येक नागरिक का तन, मन और धन राष्ट्र के लिए समर्पित होना चाहिए। सामाजिक-आस्था व्यक्त करते हुए भारत गणतन्त्र के प्रति आत्म-निवेदन करने से भावात्मक-एकता अक्षुण्ण रह सकती है।

वेदो मे हमे स्वदेश के लिए आत्म-निवेदन करने के लिए प्रेरणाप्रद वचन मिलते हैं—

> 'नमो मात्रे पृथिव्यै'—अर्थात् मातृभूमि को प्रणाम।
> 'उपसर्प मातरं भूमिम्'—अर्थात् मातृभूमि की सेवा कर
> 'माताभूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्या.।'—अर्थात् मातृभूमि मेरी

माता है, मैं उसका पुत्र हूँ।

'वयं राष्ट्रे जागृयाम पुरोहिता।' अर्थात् हम राष्ट्र में जाग्रत होकर आदर्श नागरिक बनें।

'वहुपाय्ये यतेमहि स्वराज्ये।' अर्थात् बहुतो द्वारा प्राप्य स्वराज्य के लिए यत्न करें।

महाभारत मे 'प्रियं भारत भारतम्' कह कर भारत के प्रति आस्था व्यक्त की गई है और भारत को देवराज इन्द्र, मनु वैवस्वत् वैन्त्रपृथु, इक्ष्वाकु, ययाति, अम्बरीष, माधाता, नहुष, मुचुकुन्द, शिवि, ऋपभ, ऐल, नृग, गाधि, दिलीप, आदि बलशाली शासको व सब जनो की प्रियभूमि कहा गया है। आत्म-निवेदन के लिए मातृभूमि से अधिक महान् सत्ता कौन हो सकती है ?

हम भारतीय धर्मप्रिय है और देश प्रेम हमारे यहाँ धर्म का ही अंग रहा है। किसी समय वेदनिन्दक को नास्तिक कहा जाता था। आज हम देशद्रोही को नास्तिक कह कर दण्डित करने का नियम बना सकते है।

'बन्दे मातरम्' हमारा राष्ट्र-गीत है। राष्ट्र और राष्ट्रीयता के प्रति अपने व्यक्तित्व को पूर्णत समर्पित करते हुए हम मातृभूमि के सच्चे रूप का दर्शन कर सकते है।

श्री अर्विन्द ने कहा है—

'जिस दिन हम मातृभूमि के अखण्ड दर्शन करेंगे, उस दिन भारत की एकता सुलभ हो जायेगी। जहाँ एक देश है, एक माता है, वहाँ एक दिन एकता अवश्यम्भावी है और अनेक जातियाँ मिलकर एक बलवान् अजेय जाति मे अवश्य परिणत होगी। ··· एक ही माता के गर्भ से जन्म हुआ है, एक ही माता की गोद मे हम निवास करते हैं और एक ही माता के पचभूत मे हम सब मिल जाते है, आन्तरिक हजार झगडे होते हुए भी माता के आह्वान पर हमको मिलना होगा, एक होना होगा।'

●●